भाग-ब - पाठ्यक्रम की विषयवस्तु

इकाई	विषय	व्याख्यान की
इकाई- 1	1. समसामयिक सन्दर्भ- श्रीमद्भगवद्गीता- कर्मयोग 2. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'- परिचय पाठ- जागो फिर एक बार (दो) (कविता) 3. अमरकान्त- परिचय पाठ- दोपहर का भोजन (कहानी) 4. महादेवी वर्मा- परिचय पाठ- गिल्लू (रेखाचित्र)	
इकाई-2	1. हजारी प्रसाद द्विवेदी- परिचय पाठ- नाखून क्यों बढ़ते हैं? (ललित निबन्ध) 2. मध्यप्रदेश की लोककलाएँ (संकलित) 3. मध्यप्रदेश का लोक साहित्य (संकलित)	
इकाई-3	1. मुहावरे और कहावतें (भाषा) 2. समास- परिभाषा और भेद (शब्द-रचना/व्याकरण) 3. बीज शब्द (की वर्ड/अवधारणा मूलक शब्द) उद्योग, सभ्यता, संस्कृति, शिक्षा, सूचना-समाज	

की-वर्ड

सर्च करें

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'	जागो फिर एक बार (कविता कोश)
अमरकान्त	दोपहर का भोजन
महादेवी वर्मा	गिल्लू (गद्य कोश)
हजार प्रसाद द्विवेदी	नाखून क्यों बढ़ते हैं (गद्य कोश)
उद्योग	
सभ्यता	
संस्कृति	
शिक्षा	
सूचना-समाज	
मुहावरे और कहावतें	

(ग) सूचना-समाज प्रत्येक कार्य प्रणाली में केंद्रीय भूमिका का निर्वाह करती है।

(घ) डिजिटल माध्यम से होता है।

(ङ) उपरोक्त सभी

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए-

1. उद्योग की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
2. भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों का क्या महत्त्व है?
3. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में लघु उद्योगों की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
3. संस्कृति की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
4. सभ्यता और संस्कृति में क्या अंतर है? समझाइए।
5. शिक्षा की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
6. सूचना समाज की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
7. सूचना समाज के विकास में बाधक तत्व कौन-से हैं? समझाइए।
8. सूचना समाज और कानून पर संक्षेप में लिखिए।

❖ ❖ ★ ❖ ❖

❖ ❖ ★ ❖ ❖

4. उद्योगों के विकास से देश में-
(क) आत्मनिर्भरता आती है (ख) रोजगार में वृद्धि होती है
(ग) राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है
(घ) उपरोक्त सभी

5. सभ्यता की विशेषता है-
(क) सभ्यता का संबंध बाहरी आचरणों से है
(ख) सभ्यता को मापा जा सकता है
(ग) सभ्यता का प्रसार तीव्र गति से होता है
(घ) सभ्यता बिना प्रयास के आगे बढ़ती है
(ङ) उपरोक्त सभी

6. शिक्षा एक सतत प्रक्रिया है-
(क) सत्य (ख) असत्य

7. 'संस्कृति हमारे दैनिक व्यवहार में कला, साहित्य, धर्म, मनोरंजन और आन
में पाए जाने वाले रहन-सहन और विचार के तरीकों में हमारी प्रकृति व
अभिव्यक्ति है।'' किसकी परिभाषा है-
(क) मैकाइवर और पेज (ख) कन्हैयालाल माणिकलाल मुंश
(ग) श्यामाचरण दुबे (घ) पिडिंगटन

8. निम्न में से कौन-सा कथन सत्य है-
(क) संस्कृति मनुष्यों में ही होती है
(ख) संस्कृति पशुओं में भी पाई जाती है
(ग) संस्कृति मनुष्य तथा पशु दोनों में पाई जाती है
(घ) संस्कृति केवल सभ्य समाज में होती है

9. किन उद्योगों में मशीनों का प्रयोग बहुत कम होता है और कम पूँजी लगत
है-
(क) लघु उद्योग (ख) कुटीर उद्योग
(ग) पूँजीगत उद्योग (घ) उपभोक्ता वस्तु उद्योग

10. सूचना समाज की प्रकृति है-
(क) सूचना का स्थानांतरण और प्रभावी तीव्र गति से होता है
(ख) उच्च तकनीकी के माध्यम से होता है।

है। सूचना तकनीकी तथा इसके समस्त आधुनिक प्रयोग आज के क्रांतिकारी ...तों का प्रमुख आधार हैं। अधिकतर कार्य स्थलों और संगठनों में उच्च स्तरीय ... बिना किसी स्थान की दूरी से जल्द से जल्द हस्तांतरित की जा रही है। ...-समाज आज की आवश्यकता बन गए हैं।

संदर्भ

मंगल एम. के./ चतुर्वेदी शुभ्रा, भारतीय समाज में शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।

बघेल डी.एस., भारतीय समाज एवं संस्कृति, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल (म.प्र.)।

बघेल.डी.एस., समाजशास्त्र, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल (म.प्र.)।

मुखर्जी रवीन्द्रनाथ, भारतीय संस्कृति, विवेक प्रकाशन।

ए.बी. वेबस्टर फ्रेंक (2002 सूचना समाज के सिद्धांत)।

दुबे अभय कुमार (संपादक), समाज-विज्ञान विश्वकोश, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना, इलाहाबाद, कोलकाता।

श्रीवास्तव (डॉ.) ए. पी. समाजशास्त्र, राम प्रसाद एंड संस।

पाटिल अशोक डी./ भदौरिया एस.एस., मूलभूत समाजशास्त्रीय अवधारणाएँ, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

...तुनिष्ठ प्रश्न

सूचना-समाज किसका विकसित स्वरूप है-

(क) औद्योगिक समाज (ख) आधुनिक समाज
(ग) परंपरागत समाज (घ) आदिवासी समाज

संस्कृति की विशेषता है-

(क) संस्कृति को मापा नहीं जा सकता
(ख) संस्कृति एक समाज की समग्र सामाजिक जीवन विधि है
(ग) संस्कृति व्यक्ति विशेष द्वारा नहीं बल्कि समूह द्वारा निर्मित होती है
(घ) उपरोक्त सभी

3. प्रकृति द्वारा प्रदत्त कच्चे माल को निर्मित माल में परिवर्तित करने को कहा जाता है-

(क) उद्योग (ख) परिश्रम
(ग) आलस (घ) कार्य करना

1. इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से सेवाएँ प्राप्त करने के कारण व्यक्तिगत जानकारियों की गोपनीयता भंग हो रही है।
2. दूसरों के कंप्यूटर या ऑनलाइन काम के साथ हस्तक्षेप करना। कंप्यूटर प्रणाली के साथ हैकिंग करना।
3. किसी की प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाने के उद्देश्य से उनकी सूचनाओं को प्रकाशित करना।
4. सूचना-समाज के माध्यम से कई बार झूठी सूचनाओं को आसानी से लाखों लोगों तक पहुँचाना संभव हो गया है।
5. सूचना तकनीकी का उपयोग करके बौद्धिक पाठ की सामग्री का उत्पादन, संचार और वितरण आसान हो गया है। इस कारण आज लोग किसी पाठ की नकल, संगीत की नकल, तस्वीरों का दुरुपयोग धड़ल्ले से कर रहे हैं। इस हेतु कॉपीराइट अधिनियम, बौद्धिक संपदा कानून लाया गया है।

दायित्व

सूचना-समाज में सूचना को एक उत्पाद स्वरूप उपयोग किया गया है। संचार साधनों एवं तकनीकी के उपयोग के कारण शोध और विकास कार्यों को भी बढ़ावा मिला है। सूचना-समाज और सूचना तकनीकी के विकास के द्वारा नवीन कार्यशैली में कुछ आधारभूत अधिकारों को प्रदान किया गया है, तो कुछ दायित्वों का भी आरोपण किया गया है-

1. किसी व्यक्ति की बौद्धिक संपदा का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए।
2. किसी के मौलिक लेख या पाठ का प्रयोग करते समय कॉपीराइट का उल्लंघन न हो।
3. निजता की सुरक्षा विचारों की स्वतंत्रता का दायित्व होना आवश्यक है।

उपसंहार

मानव सभ्यता के पूर्व काल से वर्तमान समय तक सूचना का हमेशा हर स्तर पर महत्त्व रहा है। वर्तमान समय में सूचना का महत्त्व और भी बढ़ गया है। पिछले कुछ दशकों से सूचना उत्पादन का एक प्रमुख घटक बनकर उभरा है। सूचना उत्पादन में तब्दील हो चुकी है। सूचना-समाज ने ज्ञान को आम जनता की पहुँच में ला

दिया है। सूचना तकनीकी तथा इसके समस्त आधुनिक प्रयोग आज के क्रांतिकारी परिवर्तनों का प्रमुख आधार हैं। अधिकतर कार्य स्थलों और संगठनों में उच्च स्तरीय सूचना बिना किसी स्थान की दूरी से जल्द से जल्द हस्तांतरित की जा रही है। सूचना-समाज आज की आवश्यकता बन गए हैं।

संदर्भ

मंगल एम. के./ चतुर्वेदी शुभ्रा, भारतीय समाज में शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।

बघेल डी.एस., भारतीय समाज एवं संस्कृति, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल (म.प्र.)।

बघेल.डी.एस., समाजशास्त्र, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल (म.प्र.)।

मुखर्जी रवीन्द्रनाथ, भारतीय संस्कृति, विवेक प्रकाशन।

ए.बी. वेबस्टर फ्रेंक (2002 सूचना समाज के सिद्धांत)।

दुबे अभय कुमार (संपादक), समाज-विज्ञान विश्वकोश, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना, इलाहाबाद, कोलकाता।

श्रीवास्तव (डॉ.) ए. पी. समाजशास्त्र, राम प्रसाद एंड संस।

पाटिल अशोक डी./ भदौरिया एस.एस., मूलभूत समाजशास्त्रीय अवधारणाएँ, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।

महत्वपूर्ण प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सूचना-समाज किसका विकसित स्वरूप है-
   (क) औद्योगिक समाज (ख) आधुनिक समाज
   (ग) परंपरागत समाज (घ) आदिवासी समाज
2. संस्कृति की विशेषता है-
   (क) संस्कृति को मापा नहीं जा सकता
   (ख) संस्कृति एक समाज की समग्र सामाजिक जीवन विधि है
   (ग) संस्कृति व्यक्ति विशेष द्वारा नहीं बल्कि समूह द्वारा निर्मित होती है
   (घ) उपरोक्त सभी
3. प्रकृति द्वारा प्रदत्त कच्चे माल को निर्मित माल में परिवर्तित करने को कहा जाता है-
   (क) उद्योग (ख) परिश्रम
   (ग) आलस (घ) कार्य करना

डाटा के हस्तांतरण के माध्यम से होता है एवं नागरिकों द्वारा नवीन वातावरण में सूचना के समुचित प्रयोग द्वारा उपर्युक्त कौशल का विकास एवं तकनीकी का प्रयोग करके स्वयं का एवं राष्ट्र का विकास किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों से सूचना समाज एक महत्वपूर्ण घटक बनकर उभरा है।

1. सूचना एक उत्पादन में तब्दील हो चुकी है। शारीरिक श्रम के बजाय सूचना आधारित पूँजी कहीं अधिक धन पैदा कर रही है।
2. सूचना आधारित उत्पादों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ती जा रही है।
3. सूचना समाज में कच्चे माल से ज्यादा सूचना की अहमियत होती जा रही है।
4. सूचना-समाज सूचना तकनीकी तथा कंप्यूटर नेटवर्क के माध्यम से वैश्वीकरण एवं समाज का पुनर्निर्माण करता है।
5. सूचना-समाज ने आज हमारे जीवन जीने के तरीके को बदल दिया है। हम अपने आप को सूचना और सैद्धांतिक ज्ञान के इर्द-गिर्द संचालित करते रहते हैं।

सूचना-समाज के बाधक तत्त्व

वर्तमान समय में सूचना-समाज की संरचनात्मक व्यवस्था में कई बाधाएँ हैं। जिन पर विचार कर उसका समाधान खोजा जाना अति आवश्यक है ताकि सूचना समाज का सही उपयोग हर वर्ग कर सके और समाज के हर व्यक्ति को सुव्यवस्थित सूचना साधनों की पहुँच सुनिश्चित हो।

1. इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से सेवाएँ प्राप्त करने के कारण व्यक्तिगत जानकारियों की गोपनीयता भंग हो रही है।
2. दूसरों के कंप्यूटर या ऑनलाइन काम के साथ हस्तक्षेप करना, कंप्यूटर प्रणाली के साथ हैकिंग करना, किसी की प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाने के उद्देश्य से उनकी सूचनाओं को प्रदर्शित करना इस प्रकार की साइबरक्राइम जो नेटवर्क से जुड़े संचार उपकरण की सहायता से किए जा रहे हैं।
3. सूचना-समाज के माध्यम से कई बार झूठी सूचनाओं को आसानी से लाखों लोगों तक पहुँचाना संभव हो गया है। जिससे कहीं न कहीं समाज का माहौल बिगड़ गया है।

4. सूचना तकनीकी का उपयोग कर किसी बौद्धिक पाठ की सामग्री का उत्पादन, संचार और वितरण एवं किसी पाठ की नकल, तस्वीरों का दुरुपयोग करना आसान हो गया है। इसलिए कॉपीराइट अधिनियम व बौद्धिक संपदा कानून भी लाया गया है।
6. सूचना-समाज में आधुनिक तकनीक का प्रयोग कर अपराधों की संख्या में वृद्धि हुई है। अलग आपराधिक समूह सक्रिय हुआ है, जिसमें अपराध करने वाले बौद्धिक शक्ति के धनी व्यक्ति होते हैं और अपराध करने के लिए डिजिटल उपकरणों का उपयोग करते हैं।

सूचना-समाज और कानून

आधुनिक समाज आधारभूत परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। जहाँ सूचना-समाज का मार्ग प्रशस्त कर रहा है और इसके कारण व्यावसायिक गतिविधियाँ मीडिया, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन, सामाजिक विज्ञान, वितरण आदि सभी प्रभावित हैं। सूचना सेवाओं और वस्तुओं के उत्पादन में दूरसंचार ब्रॉडकास्टिंग व मल्टीमीडिया का उपयोग करता है। सूचना एवं संचार तकनीकी के उपयोग को सरल बनाने और लोकप्रिय बनाने के लिए कानून व्यवस्था की गई है। जिसके लागू करने पर ही ई-गवर्नेंस, ई-बैंकिंग व्यवसाय जैसी सेवाओं का विकास सुनिश्चित हुआ है। सूचना समाज की व्यवस्था को सुदृढ़ता प्रदान करने हेतु कुछ कानून लाए गए हैं जो इस प्रकार हैं-

1. कॉपीराइट अधिनियम,
2. आईटी एक्ट, 2000,
3. बौद्धिक संपदा अधिकार,
4. सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005।

सूचना-समाज के बाधक तत्त्व

वर्तमान समय में सूचना-समाज के संरचनात्मक व्यवस्था में कई बाधाएँ हैं। जिन पर विचार कर उनका समाधान खोजा जाना अति आवश्यक है। ताकि सूचना-समाज का सही उपयोग हर वर्ग कर सके और उस तक सुव्यवस्थित सूचना साधनों की पहुँच सुनिश्चित हो। आज अनेक माध्यमों के द्वारा साइबर क्राइम नेटवर्क से जुड़े संचार उपकरणों की सहायता से किए जाते हैं; जो इस प्रकार हैं-

यदि संभव हो तो उसकी उन्नति भी कर सकें।''

शिक्षा केवल स्कूलों में दिए जाने वाले ज्ञान तक सीमित नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन की लंबी यात्रा में किसी-न-किसी से सदैव कुछ न कुछ सीखता ही रहता है। शिक्षा का उद्देश्य जन्मजात शक्तियों का सर्वांगीण विकास करना है। शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है जो उद्देश्य काल तथा परिस्थिति के अनुसार सदैव अग्रसर रहती है।

सूचना-समाज

सूचना-समाज एक स्थान से दूसरे स्थान पर सूचना भेजने का और प्राप्त करने का साधन कहा जा सकता है। आधुनिक समय में जैसे-जैसे उन्नत तकनीक आती जा रही है वैसे-वैसे लोगों में अपने आप को व्यक्त करने, अपनी जानकारी साझा करने के तरीके बदलते जा रहे हैं। सूचना समाज से अभिप्राय ऐसे समाज से है जहाँ सूचना का निर्माण, हस्तांतरण और वितरण किया जाता है।

मासबर्गर द्वारा इसे इस प्रकार से परिभाषित किया गया है- ''वह जो नियमित रूप से प्रभावी ढंग से इंटरनेट का उपयोग करते हैं अर्थात जो लोग समाज के इस रूप में भाग लेने में सक्षम हैं। उन्हें कंप्यूटर उपयोगकर्ता या डिजिटल नागरिक भी कहा जा सकता है।''

पीटर डर्कर ने इसे समाज का हस्तांतरण कहा है; जिसमें उत्पाद वस्तुओं पर आधारित अर्थव्यवस्था वाले समाज से सूचना तथा ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था वाला समाज विकसित हो।

डेनियल बैल के अनुसार ''उन व्यक्तियों की संख्या जो सेवा और सूचना के उत्पादन में लगे हैं। समाज के सूचनात्मक गुणों के द्योतक हैं। सूचना समाज में कच्चे माल, ऊर्जा से ज्यादा सूचना की अहमियत होती है।''

सूचना समाज की प्रकृति

1. सूचना-समाज में सूचना का हस्तांतरण तीव्र, प्रभावी और उच्च तकनीकी पर आधारित होता है।
2. सूचना-समाज में ज्ञान, अध्ययन, अनुसंधान जैसी गतिविधियाँ प्रमुख होती हैं।
3. सूचना-समाज के माध्यम से प्राप्त सूचनाएँ समाज के विकास में सहायक होती हैं।
4. सूचना-समाज में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का तंत्र सूचना के प्रभावी उपयोग का आधार होता है।
5. सूचना का डिजिटल स्वरूप में रूपांतरित कर उसका वितरण किया जाता है।
6. सूचना-समाज को औद्योगिक-समाज का विकसित स्वरूप समझा जाता है।
7. सूचना प्रतिमान के माध्यम से सामाजिक विकास की नई प्रवृत्तियों को समझा जा सकता है।

सूचना-समाज की अवधारणा

वर्तमान समय में इसकी कोई सार्वभौमिक स्वीकृत अवधारणा नहीं है। ऐसा माना जाता है कि ऐसे समाज जिसमें सूचनाओं का निर्माण, वितरण, एकीकरण किया जाता है। संचार प्रौद्योगिकी इसका मुख्य माध्यम है। जिसके परिणामस्वरूप तेजी से सूचना में वृद्धि हुई है। सूचना-समाज को हम एक ऐसे समाज के माध्यम से समझ सकते हैं जहाँ लोग अभौतिक श्रम करते हैं। अपनी बात को डिजिटल माध्यम से प्रभावी ढंग से विस्तारित करते हैं। आज मनुष्य समाज के एक अलग स्वरूप में प्रवेश कर रहा है। मौखिक विकास के अवसर कम हो रहे हैं। आज हम डिजिटल माध्यम से संकेतों द्वारा अपनी बात को, अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त कर रहे हैं।

सूचना-समाज वह है जिसने आज हमारे जीवन जीने के तरीके को बदल दिया है। आज हम अपने आप को सूचना के इर्द-गिर्द ही संचालित करते रहते हैं। हमारी स्वयं की सोच नहीं रह गई है। इसके निकट की अवधारणाएँ हैं,जैसे ज्ञान-समाज, उत्तर-आधुनिक समाज, कंप्यूटर समाज, उत्तर-औद्योगिक समाज, नेटवर्क समाज, सूचना-क्रांति समाज आदि।

सूचना-समाज की आवश्यकता

वर्तमान समय में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है कि हम किस प्रकार के समाज में जी रहे हैं तथा सूचना और तकनीकी की इस समाज में क्या भूमिका है? इस समाज में उच्च तकनीकी साधनों का उपयोग कर सामाजिक, शैक्षणिक तथा व्यापारिक गतिविधियों का संचालन बिना किसी दूरी से जल्द से जल्द डिजिटल

कन्हैयालाल-माणिकलाल मुंशी के अनुसार, 'संस्कृति जीवन की उन अवस्थाओं का नाम है जो मनुष्य के अंदर व्यवहार, ज्ञान और विवेक पैदा करती है। यह उनके सामाजिक व्यवहारों को निश्चित करती है। उनकी संस्थाओं को चलाती है, उनके साहित्य और भाषा को बनाती है, उनके जीवन के आदर्श और सिद्धांतों को प्रकाश देती है।'

काका कालेलकर के अनुसार, 'हजारों और लाखों वर्षों के पुरुषार्थ से मनुष्य जाति ने जो कुछ भी पाया है, वही उसकी संस्कृति है।'

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है -

1. संस्कृति की सर्वाधिक मौलिक विशेषता है कि संस्कृति सीखी जाती है।
2. संस्कृति को मापा नहीं जा सकता।
3. संस्कृति की उन्नति एवं अवनति होती रहती है।
4. संस्कृति का प्रसार तीव्र गति से नहीं होता।
5. संस्कृति यह बताती है कि हम क्या हैं?
6. एक समाज की अपनी एक विशिष्ट संस्कृति होती है।
7. संस्कृति वंशानुगत रूप से निर्धारित नहीं होती। बल्कि पूर्णतः सामाजिक सीख की प्रक्रिया का प्रतिफल है।
8. प्रत्येक समाज की एक विशेष संस्कृति होती है।
9. संस्कृति मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होती है।
10. हर समाज की संस्कृति वहाँ की भौगोलिक एवं सामाजिक परिस्थिति को ध्यान में रखकर निर्मित की जाती है।
11. संस्कृति व्यक्ति विशेष द्वारा निर्मित नहीं है, बल्कि संपूर्ण समूह द्वारा निर्मित होती है।

शिक्षा (Education)

शिक्षा का शाब्दिक अर्थ सीखना और सिखाना होता है। 'शिक्षा' शब्द 'शिक्ष' धातु से बना है। शिक्षा का अर्थ है ज्ञान प्राप्त करना अथवा विद्या ग्रहण करना। इशोपनिषद के अनुसार विद्या से आशय उस ज्ञान से है जिसको प्राप्त करने के पश्चात

कुछ जानना शेष न रह जाए। इस अर्थ में विद्या से तात्पर्य है आत्मज्ञान। शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा एक मानव की छुपी हुई शक्तियों को विकसित किया जाता है। शिक्षा आंतरिक वृद्धि तथा विकास की न समाप्त होने वाली प्रक्रिया है। इसकी अवधि जन्म से मृत्यु तक फैली हुई है। शिक्षा एक सतत प्रक्रिया है, जिसमें मनुष्य अपने आपको अपनी आवश्यकतानुसार भौतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक वातावरण के अनुकूल बना देता है। शिक्षा का वास्तविक अर्थ मनुष्य को मानव बनाना तथा जीवन को सांस्कृतिक एवं सभ्य बनाना है। शिक्षा द्वारा ही मनुष्य अपने विचार को तर्कशील बनाता है एवं अपनी विचार शक्ति, बौद्धिकता, प्रतिभा, अच्छे मूल्य तथा रुचियों का विकास करता है। मनुष्य प्रतिदिन हर क्षण हर पल कुछ न कुछ सीखता है और उसका समस्त जीवन शिक्षा है। शिक्षा के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए विभिन्न विद्वानों की परिभाषाएँ इस प्रकार हैं -

महात्मा गाँधी के अनुसार, ''शिक्षा का अर्थ मैं बालक एवं मनुष्य की आत्मा, शरीर और बुद्धि के सर्वांगीण विकास से समझता हूँ।''

एस.एस.मैकेंजी- ''व्यापक अर्थ में शिक्षा ऐसी प्रक्रिया है जो जीवनपर्यंत चलती है तथा जीवन के प्रत्येक अनुभव से उसमें वृद्धि होती है।''

टी. रेमोंट के अनुसार- ''शिक्षा उस विकास का नाम है जो शैशव अवस्था से प्रौढ़ अवस्था तक होता ही रहता है अर्थात् शिक्षा वह क्रम है, जिससे मानव अपने को आवश्यकतानुसार भौतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक वातावरण के अनुकूल बना लेता है।''

शिक्षा के विभिन्न अर्थ तथा परिभाषाओं के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा एक सापेक्ष चेतन, अचेतन, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, वैज्ञानिक एवं दार्शनिक वातावरण संबंधी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व से सम्बंधित सभी अंगों का विकास होता है।

शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य सर्वांगीण विकास करना और समाज की उन्नति होना चाहिए। शिक्षा के द्वारा समाज भावी पीढ़ी के बालकों को उच्च आदर्शों, आशाओं, विश्वासों तथा परंपरावादी सांस्कृतिक संपत्ति को इस प्रकार से हस्तांतरित करता है कि उनके हृदय में देश-प्रेम तथा त्याग की भावना प्रज्वलित हो जाती है।

जे. एस. मिल के अनुसार ''शिक्षा द्वारा एक पीढ़ी के लोग दूसरी पीढ़ी के लोगों में संस्कृति का संक्रमण करते हैं ताकि वे उसका संरक्षण कर सकें और

कर सकते हैं तथा उच्च सभ्यता का निर्माण बौद्धिक प्रौद्योगिकी, ललित कला और आध्यात्मिक उपलब्धियों के आधार पर ही किया जा सकता है। उपर्युक्त विद्वानों के विचारों के आधार पर कहा जा सकता है कि सभ्यता का प्रत्यक्ष संबंध मुख्य रूप से उपयोगिता से है। हवाई जहाज, मोटर, रेल, टेलीफोन आदि सभी सभ्यता के अंग हैं और यह सभी उपयोगी हैं।

सभ्यता का प्रसार बिना प्रयास सफलतापूर्वक हो जाता है। विश्व के सभी देशों में लोग वैज्ञानिक उपकरणों का उपयोग करते हैं। जैसे ही नई टेक्नोलॉजी आती है विश्व के सभी व्यक्ति सीखते जाते हैं और यह उनके जीवन के अभिन्न अंग बन जाते हैं।

1. सभ्यता विकसित समाजों का प्रतीक होती है इसी वजह से यह अधिक प्राचीन नहीं है।
2. आदिम समाज व जनजातीय समाजों में संस्कृति विद्यमान रहती है, परंतु सभ्यता का विकास उच्च स्तर पर नहीं हो पाता।
3. सभ्यता विकसित समाज का प्रतीक है।
4. सभ्यता निरंतर प्रगतिशील होती है। यह कभी पीछे नहीं लौटती। उदाहरण के लिए रेलगाड़ी के उपरांत हवाई जहाज और उसके तुरंत उपरांत रॉकेट यानों का प्रचलन हुआ। भौतिक साधन निरंतर प्रगति करते रहते हैं।
5. सभ्यता संस्कृति की वाहक होती है।
6. सभ्यता से संस्कृति के स्वरूप का निर्माण होता है।
7. सभ्यता द्वारा संस्कृति के अनुकूल वातावरण का निर्माण किया जाता है।
8. परिवर्तनशीलता सभ्यता की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है। चूँकि सभ्यता का प्रत्यक्ष संबंध मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति से रहता है तथा आवश्यकताओं में परिवर्तन के गुण होते हैं अत: आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए सभ्यता भी परिवर्तित होती जाती है। नए नए आविष्कार नई-नई चीजें सभ्यता के अंग के रूप में स्वीकार किए जाने लगते हैं।

संस्कृति (Culture)

संस्कृति, संस्कृत शब्द से उत्पन्न हुआ शब्द है। संस्कृति का अर्थ है परिष्कृत (Refined) शुद्ध किया हुआ। लौकिक अर्थ में संस्कृति जीवन जीने का ढंग है। ऐतिहासिक अर्थ में ऐतिहासिक उपलब्धियाँ ही संस्कृति है। मानव शास्त्रीय अर्थ में संस्कृति संपूर्ण जीवन का ढंग है जिसमें ज्ञान,विश्वास, कलाएँ, नीति, विधि, रीति-रिवाज और समाज के सदस्य होने के नाते मनुष्य की अर्जित योग्यताएँ और आदतें सम्मिलित होती हैं। मानव और अन्य प्राणियों में भिन्नता का मूल आधार मानव की अपनी संस्कृति है।

मनुष्य जिस संस्कृति में पलता है उसी के अनुरूप उसका विकास भी होता है। संस्कृति के कारण एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से, एक समूह दूसरे समूह से तथा एक समाज दूसरे समाज से भिन्न होता है। उदाहरण के लिए परस्पर शिष्टाचार में एक दूसरे के साथ अभिवादन के तरीके में हम भिन्नता देखते हैं। आम भारतीय दोनों हाथों को जोड़कर अभिवादन करता है। फ्रांस में दोनों गालों को चूमकर अभिवादन किया जाता है। कुछ लोग दाहिनी हथेली पकड़कर ऊपर नीचे झुलाते हैं। इन सभी उदाहरणों में सामाजिक व्यवहार और परिस्थिति समान है किंतु आचरण का ढंग अलग-अलग है। यह आचरण समाज की सांस्कृतिक परंपरा से जुड़े होते हैं। दैनिक आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए किसी समाज के व्यक्ति जिन तरीकों को अपनाते हैं; उसी आधार पर उन लोगों की भाषा, धार्मिक, आस्थाएँ, परिवार, विवाह का स्वरूप, संबंधों का स्वरूप, शिष्टाचार के मापदंड के आधार पर हम उनकी संस्कृति को पहचानते हैं। संस्कृति अतीत काल की समृद्धशाली विरासत होती है।

मैकाइवर और पेज के अनुसार- 'संस्कृति हमारे दैनिक व्यवहार में कला, साहित्य, धर्म, मनोरंजन और आनंद में पाए जाने वाले रहन-सहन और विचार के तरीकों में हमारी प्रकृति की अभिव्यक्ति है।'

डॉ. श्यामाचरण दुबे ने संस्कृति की परिभाषा इस प्रकार दी है, 'सीखे हुए व्यवहार प्रकारों की उस समग्रता को जो किसी समूह को विशिष्टता प्रदान करती है, संस्कृति की संज्ञा दी जा सकती है। अन्य शब्दों में किसी समूह के ऐतिहासिक विकास में जीवन-यापन के लिए विशिष्ट स्वरूप विकसित हो जाते हैं, वे ही उस समय की संस्कृति हैं।'

ों को पूर्णकालीन रोजगार प्रदान करते हैं। इनके उत्पादन का बाजार विस्तृत ता है। इसमें आधुनिक वस्तुएँ जैसे- रेडियो, टेलीविजन, इलेक्ट्रॉनिक सामान का पादन किया जाता है।

घु उद्योगों की आवश्यकता

लघु उद्योगों का मुख्य उद्देश्य रोजगार के अवसरों में वृद्धि करते हुए रोजगारी की समस्या का समाधान करना है। लघु उद्योगों के माध्यम से देश की स्कृति व सभ्यता भी सुरक्षित रहती है। इससे देश की परंपरागत कलाएँ संरक्षित की जा सकती हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती ।

लघु उद्योग अपने वस्तुओं का उत्पादन करके राष्ट्रीय उत्पादन में योगदान ते हैं। इन उद्योगों में यदि तकनीकी को बढ़ा दिया जाए तो यह इनकी उत्पादकता में सुधार ला सकता है। देश के आजाद होने के बाद इन उद्योगों के विकास हेतु काफी प्रयास किए गए हैं। आज लघु एवं कुटीर उद्योग हमारे देश की अर्थव्यवस्था के महत्त्वपूर्ण अंग बन गए हैं। उद्योगों के विकास से देश की बेरोजगारी कम हो रही है और कृषि पर निर्भरता भी कम होती जा रही है।

सभ्यता (Civilization)

सभ्यता शब्द अँग्रेजी के 'civilization' शब्द का पर्याय है। विश्व प्रसिद्ध समाजशास्त्री मैकाइवर ने सभ्यता और संस्कृति में अंतर बताते हुए कहा है कि- 'संस्कृति भौतिक तथा अभौतिक पक्ष का संयुक्त नाम है, जबकि सभ्यता शब्द का प्रयोग का भौतिक संस्कृति को स्पष्ट करने हेतु किया जाना श्रेयस्कर है।' मानव की सामाजिक विरासत के भौतिक पक्ष को सभ्यता एवं अभौतिक पक्ष को संस्कृति कहा जा सकता है। इस आधार पर कहा जा सकता है सभ्यता के अंतर्गत वे सभी भौतिक वस्तुएँ आ जाती हैं जिन्हें मानव छू कर देख सकता है तथा जिनका निर्माण मानव में अपनी आवश्यकता पूर्ति हेतु करता है।

मैकाइवर और पेज के अनुसार- 'सभ्यता से हमारा आशय उस संपूर्ण प्रविधिक संगठन से है जिसे कि मनुष्य ने अपने जीवन की दशाओं को नियंत्रित करने के प्रयत्न में बनाया है।'

फेयर चाइल्ड के अनुसार- 'उच्च एवं विकसित संस्कृति ही सभ्यता है।' आपका मत है कि हम असभ्य व्यक्तियों के संदर्भ में ही सभ्य व्यक्तियों की चर्चा

रोजगार में वृद्धि- नए-नए उद्योगों को लगाए जाने से देश के ल
बेरोजगारों को इन उद्योगों में काम मिलने लगेगा और बेरोजगारी की दर भी
होगी।

राष्ट्रीय आय में वृद्धि- उद्योगों को लगाने से प्राकृतिक संसाधनों का उ
उपयोग कर उत्पादन और व्यापार बढ़ेगा और राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी।

आत्मनिर्भरता में वृद्धि- उद्योगों के विकास से हमारे देश में हम
आवश्यकता की वस्तुओं का निर्माण हम स्वयं ही कर लेंगे बाहरी कंपनियों से ह
सामान नहीं बुलवाना पड़ेगा। उद्योगों की स्थापना से देश की आवश्यकता की सामग्र
रक्षा सामग्री व अन्य जरूरत की सामग्री का निर्माण करना संभव होगा।

कृषि पर जनसंख्या का दबाव कम होगा- जनसंख्या वृद्धि के कारण कृ
पर दबाव बढ़ा है। उद्योगों की स्थापना से कृषि पर जनसंख्या का दबाव कम होगा

विदेशों पर निर्भरता कम होगी- उद्योगों की स्थापना से विदेशों पर निर्भरत
कम होगी। भारत में बनी सामग्री का उपयोग करने से देश का आर्थिक विकास
होने के साथ-साथ आत्मनिर्भरता में वृद्धि होगी।

उद्योगों का वर्गीकरण

1. **बड़े पैमाने के उद्योग** (Large Scale Industries)

क. आधारभूत उद्योग- लोहा, स्टील, कोयला, उर्वरक, एल्यूमीनियम, बिजली उद्योग आदि।

ख. पूँजीगत वस्तु उद्योग- टायर्स, मोबिल ऑयल उद्योग आदि।

ग. उपभोक्ता वस्तु उद्योग- चीनी, कपड़ा, कागज उद्योग आदि।

2. **गैर कारखाना निर्माण इकाइयाँ**-

क. कुटीर उद्योग- कुटीर उद्योग वह हैं जो पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से परिवार के सदस्यों की सहायता से पूर्णकालीन या अंशकालीन व्यवसाय के रूप में चलाया जा सके। कुटीर उद्योग अधिकतर घरों में ही चलते हैं और इसमें मशीनों का उपयोग बहुत कम होता है इसमें पूँजी बहुत कम लगती है। इन्हें ग्रामीण उद्योग भी कहा जाता है।

ख. लघु उद्योग- वे इकाइयाँ जिनको कम पूँजी और कम श्रमिकों के साथ चालू किया जाता है। लघु उद्योग अर्ध शहरी क्षेत्रों में स्थापित किए जाते हैं। यह

3.
बीज शब्द

अवधारणा मूलक शब्द- उद्योग, सभ्यता, संस्कृति, शिक्षा एवं सूचना-

ज।

बीज-शब्द एक ऐसा लाक्षणिक अर्थ में प्रयुक्त शब्द है जिसकी आरंभिक आगे चलकर बहुत बड़ा रूप धारण करती है। बीज शब्द को उस पारिभाषिक के रूप में व्याख्यायित कर सकते हैं जिनमें बहुत से भाव सूक्ष्म रूप से वेशित हों एवं जिसका तात्पर्य दूसरे लोग जिन्हें सांकेतिक अर्थों का ज्ञान न न जान सकें। ये शब्द किसी विशेष विधा (कार्यक्षेत्र) में प्रयोग किए जाने ले शब्द होते हैं। जो किसी विशेष ज्ञान के क्षेत्र में एक निश्चित अर्थ में प्रयुक्त ए जाते हैं। इन शब्दों के प्रयोग से विषय की गहराई को समझने में सहायता लती है।

उद्योग (Industry)

प्रकृति द्वारा कच्चे माल को निर्मित माल या तैयार माल के रूप में परिवर्तित करने के लिए जो व्यावसायिक क्रियाएँ की जाती हैं, उन्हें उद्योग कहा जाता है। उद्योगों के विकास के द्वारा आय, उत्पादन तथा रोजगार के अवसरों को बढ़ाया जा सकता है। भारतीय अर्थव्यवस्था की विकास दर में वृद्धि की जा सकती है। स्वतंत्रता के समय भारत में उद्योगों का विकास कम किया गया था, परंतु आजादी के बाद भारत में औद्योगीकरण के विकास पर बल दिया गया। नए- नए उद्योगों की स्थापना की गई। पुराने उद्योगों की कुशलता में भी वृद्धि की गई।

देश में उद्योगों की स्थापना की आवश्यकता

संतुलित अर्थव्यवस्था के विकास में सहायक-उद्योगों की स्थापना से देश की अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलेगी।

संदर्भ

1. प्रसाद वासुदेवनंदन, आधुनिक हिंदी व्याकरण और रचना, भारती भवन।
2. प्रो. बाल गोविंद मिश्र, कृष्ण कुमार शर्मा, डॉ. राजकमल पांडे, हिंदी- व्याकरण और प्रयोग, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
3. भटनागर राजेंद्र मोहन, आधुनिक हिंदी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली।

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए-

1. समास किसे कहते हैं?
2. समास के कितने भेद हैं? समझाइए।
3. तत्पुरुष समास के भेद समझाइए।
4. कर्मधारय और बहुब्रीहि समास में अन्तर बताइए।
5. द्वन्द्व और द्विगु समास में अन्तर बताइए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. समास का शाब्दिक अर्थ है-
   (क) संक्षिप्तीकरण करना (ख) विस्तार करना
   (ग) अर्थ बताना (घ) अर्थ बदलना
2. कौन सा-पद द्वंद्व समास का उदाहरण नहीं है-
   (क) सुख-दुःख (ख) पाप-पुण्य
   (ग) झूठा-सच (घ) माता-पिता
3. कौन-सा पद कर्मधारय समास है-
   (क) मुखचंद्र (ख) जलचर
   (ग) ऋषि (घ) सहोदर
4. कौन-सा द्विगु समास है-
   (क) नवग्रह (ख) चंद्रशेखर
   (ग) सेनापति (घ) देशभक्ति
5. वह कौन-सा समास है? जिसमें दोनों पद प्रधान होते हैं-
   (क) द्वन्द्व समास (ख) द्विगु समास
   (ग) बहुब्रीहि समास (घ) कर्मधारय समास

❖ ❖ ★ ❖ ❖

कर्मधारय और बहुब्रीहि समास में अन्तर

1. कर्मधारय समास में समस्त पद एक-दूसरे का विशेषण है, जैसे- नीलकमल- नीले कमल को नील कमल कहा गया है। पीताम्बर- पीत वस्त्र को कहा गया है। बहुब्रीहि समास में दोनों पदों में विशेषण और विशेष्य का कोई सम्बन्ध नहीं होता है, जैसे- पीताम्बर- पीत है अम्बर जिसका अर्थात् श्रीकृष्ण।
2. बहुब्रीहि समास किसी तीसरे पद की ओर संकेत करता है, जबकि कर्मधारय समास में ऐसा नहीं है।
3. कर्मधारय समास में दोनों पद लिंग-वचन में समान होते हैं, जबकि बहुब्रीहि समास में पद का लिंग विशेष्य के अनुसार होता है।

द्विगु समास- जिसका पूर्व पद संख्या बोधक हो वह द्विगु समास कहलाता है।

जैसे- त्रिकाल, नवग्रह, चौराहा, चौमासा इसमें बहुब्रीहि समास की भाँति अन्य पद प्रधान नहीं होता।

द्वन्द्व समास- इसमें सभी पद प्रधान होते हैं। दोनों पदों के बीच में और का लोप होता है। विकल्प सूचक समुच्चयबोधक प्रत्यय के द्वारा इनके दोनों पद जुड़े रहते हैं।

जैसे- गाय-बैल, राम-कृष्ण, माता-पिता, दिन-रात, हाथ-पाँव, छल-कपट आदि।

द्वन्द्व समास और दिगु समास में अन्तर

1. द्वन्द्व समास के दोनों ही पद प्रधान होते हैं, जबकि द्विगु समास में पहला पद संख्यावाचक होता है।
2. द्वन्द्व समास में योजक चिह्न होता है, जो दो पदों को मिलाते समय लुप्त हो जाता है, जबकि द्विगु समास में योजक चिह्न नहीं होता है।

अव्ययीभाव समास- इसमें पूर्व पद अव्यय और प्रधान होता है। इस समास में समूचा पद क्रिया विशेषण अव्यय हो जाता है। जैसे- आजन्म, प्रतिदिन में 'आ' व 'प्रति' अव्यय हैं।

संप्रदान तत्पुरुष- इसमें 'को' 'के' 'लिए' परसर्ग का लोप होता है

जैसे- हथकड़ी- हाथ के लिए कड़ी
विद्यालय- विद्या के लिए आलय
रसोईघर- रसोई के लिए घर

अपादान तत्पुरुष- इसमें 'से' अलग होने का भाव का लोप होता है

जैसे- ऋणमुक्त- ऋण से मुक्त,
धर्मभ्रष्ट- धर्म से भ्रष्ट
कामचोर- काम से जी चुराने वाला

संबंध तत्पुरुष- इसमें 'का', 'की', 'के' लोप हो जाता है।

जैसे- विद्यारंभ- विद्या का आरंभ।
सेनापति- सेना का पति।
पराधीन- पर का अधीन।
राजदरबार- राजा का दरबार।

अधिकरण तत्पुरुष समास- इसमें में/पर विभक्ति का लोप हो जाता है

जैसे- शरणागत- शरण में आगत।
गृहप्रवेश- गृह में प्रवेश।
आपबीती- आप पर बीती।

कर्मधारय समास- इसमें एक शब्द की उपमा दूसरे शब्द से दी जाती है इसमें उपमान उपमेय का संयोग रहता है। विशेषण तथा विशेष्य का मेल रहता है

जैसे- महात्मा- महान है जो आत्मा
स्वर्णकमल- स्वर्ण का है जो कमल
पीतांबर-पीला है जिसका अंबर

बहुव्रीहि समास- इसमें पदों के मेल से दूसरा ही अर्थ निकलता है। अर्थात समस्त पदों में कोई भी प्रधान नहीं होता, बल्कि पूरा समस्तपद ही किसी अन्य पद का विशेषण होता है।

जैसे- त्रिनेत्र (तीन हैं नेत्र जिसके) अर्थात् शिव जी
पीतांबर (पीला है अंबर जिसका) अर्थात् भगवान विष्णु
सहस्त्रानंद (सहस्त्र हैं मुख जिसके) अर्थात् शेषनाग

2.
समास

समास का शाब्दिक अर्थ संक्षिसीकरण या छोटा रूप अर्थात् जब दो या दो से अधिक पदों शब्दों से मिलकर एक नया छोटा शब्द बनता है तो उस शब्द को समास कहते हैं। अर्थात कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक अर्थ को प्रकट करने की क्रिया समास है। हिन्दी नव्याकरण में समास एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। समास का कभी उत्तरपद प्रधान होता है तो कभी पूर्वपद।

सामासिक पद जिन शब्दों से मिलकर बनते हैं उन्हें खंड से समस्त पदों में जुड़े हुए शब्दों को अलग-अलग बनाने की विधि को विग्रह कहते हैं। दो या दो से अधिक शब्दों से मिलकर बनने वाला स्वतंत्र पद सामासिक पद कहा जाता है। उदाहरण के लिए जैसे पीतांबर में दो पद हैं पीत और अम्बर। संधि विच्छेद होगा- पीत + अम्बर जबकि समास विग्रह होगा- पीत है, जिसका अंबर = पीतांबर।

समास के छह भेद हैं-

1. **तत्पुरुष समास**- तत्पुरुष समास में प्रथम शब्द गौण और द्वितीय पद प्रधान होता है। साधारणतः प्रथम पद विशेषण द्वितीय पद विशेष्य होता है। इसमें कारक चिह्न का लोप हो जाता है। कारक तथा अन्य आधार पर तत्पुरुष के निम्नलिखित भेद होते हैं-

कर्म तत्पुरुष- को परसर्ग (विभक्ति) का लोप होता है।

जैसे- गगनचुम्बी-गगन को चूमने वाला
स्वर्गप्राप्त- स्वर्ग को प्राप्त करने वाला
माखनचोर- माखन को चुराने वाला

करण तत्पुरुष- इसमें 'से' परसर्ग का लोप होता है।

जैसे- तुलसीकृत- तुलसी से कृत
नीतियुक्त- नीति से युक्त

- अरहर की टट्टी गुजराती ताला (छोटी चीजों के लिए अधिक व्य करना)।
- अपनी-अपनी ढपली, अपना-अपना राग (सबकी अपनी अलग पृथक् पृथक विचारधारा होना)।
- जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ (जितनी मेहनत अधिक करो उतना अधिक पाओगे)।
- घाट-घाट का पानी पीना (अनुभवी होना)।
- नाच न जाने आँगन टेढ़ा (काम न जानना और बहाना बनाना)।
- होनहार बिरवान के होत चिकने पात (प्रतिभावान के लक्षण पहले ही दिखाई देने लगते हैं)।
- आँख का अंधा नाम नयनसुख (अपने गुणों के विपरीत प्रकृति का होना)
- आगे नाथ न पीछे पगहा (किसी भी प्रकार की जिम्मेदारी का न होना)
- आम के आम गुठलियों के दाम (कम कीमत में अधिक लाभ)।
- बाज के बच्चे मुंडेर पर नहीं उड़ा करते (बड़ी सोच रखने वाले कभी छोटी-छोटी चीजों के पीछे नहीं भागते)।
- अपने जोगी नंगा तो का दिये वरदान (जिसके पास स्वयं ही कुछ न हो वह आपको क्या देगा)।
- पाँव गरम, पेट नरम और सिर हो ठंडा, तो वैद्य को मारो डंडा (अच्छे स्वास्थ्य की निशानी)।
- अंधे के आगे रोना, अपना दीदा खोना (संवेदनहीन व्यक्ति के सामने अपना दुखड़ा रोने का कोई मतलब नहीं)।
- चले हल न चले कुदाली, बैठे भोजन दे मुरारी (आलसी व्यक्तियों के लिए कहा गया है। बिना हल और कुदाल चलाए ईश्वर आपको खाने के लिए देता है)।
- चाल चले सादा, निभाए बाप दादा (अर्थात् सादा जीवन उत्तम होता है)।
- थोड़ा-थोड़ा जोड़ो, मुनाफा कभी न छोड़ो (अर्थात् थोड़ा-थोड़ा करके बचत करनी चाहिए और खरीदने या बेचते समय मुनाफा हमेशा देखना चाहिए)।

- चुल्लू भर पानी में डूब मरना- लज्जित होना।
- चार चाँद लगाना- दूनी शोभा बढ़ाना।
- चलता पुर्जा होना- चतुर होना।
- चिकनी-चुपड़ी बातें करना- बनावटी प्रेम प्रदर्शित करना।
- चेहरे का रंग उड़ना- लज्जित होना।
- चने चबाना- मुसीबत में डालना।
- छक्के छुड़ाना- हौसले पस्त करना।
- छाती पर साँप लोटना- ईर्ष्या करना।
- छाती ठोकना- साहस से काम लेना।
- छाती फूलना- प्रसन्न होना।
- छाती पर सवार होना- काम के लिए अड़ जाना।
- जहर का घूँट पीना- क्रोध रोकना।
- जूतियाँ चटकाना- भटकते रहना।
- जी छोटा करना- निरुत्साहित होना।
- जूते की नोंक पर मारना- अति तुच्छ समझना।
- झक सवार होना- जिद।
- तिनके का सहारा- थोड़ा-सा सहारा।
- टस से मस न होना- कोई परिवर्तन न होना।
- टाँग अड़ाना- व्यर्थ में दखल देना।
- ठोकरें खाना- कष्ट उठाना।
- ठन-ठन गोपाल- दरिद्रता आना।
- डंक मारना- हानि पहुँचाना।
- ढपोल शंख- कहे अधिक परंतु करे कुछ नहीं।
- धूनी रमाना- संन्यास लेना।

4. समाज और देश के सामाजिक जीवन के विकास के साथ-साथ मुहावरे भी बनते बिगड़ते जाते हैं।
5. मुहावरा संक्षिप्त होता है।
6. मुहावरों के प्रयोग से भाषा में अद्‌भुत चित्रमयता आती है।
7. इनका प्रयोग वाक्य सौंदर्य को बढ़ाने में किया जाता है।
8. मुहावरे के लिए लोक की स्वीकृति होना आवश्यक है।
9. मुहावरे के शब्द क्रम में परिवर्तन संभव नहीं है, जैसे- नौ दो ग्यारह होना के स्थान पर दो नौ ग्यारह होना नहीं लिखा जा सकता।
10. मुहावरे में अभिधा अर्थ के बजाय लाक्षणिक अर्थ की प्रधानता होती है। वक्रता, व्यंजना इसके साथी-संगी हैं।

यह बात ध्यान रखने योग्य है कि अपने प्रयोग में मुहावरा अनेक रूप ले सकता है। स्थानीय बोली के अनुसार किंचित परिवर्तन संभव है, लेकिन मूल रूप रहता है जो पूर्व में भाषा में चल रहा है। अर्थात् मुहावरे को हम इस प्रकार से समझ सकते हैं- ऐसा शब्द-बंध जो साधारण भाषा में व्याप्त अर्थ को असाधारण रूप में परिवर्तित कर दे। इसके प्रयोग से भाषा में विलक्षणता, सरसता, सारगर्भिता, प्रवाहमयता, प्रभावोत्पादकता और भावों की अभिव्यक्ति करना आसान हो। उदाहरण के लिए कुछ प्रसिद्ध मुहावरे निम्नानुसार हैं—

- अक्ल पर पत्थर पड़ना- बुद्धि नष्ट होना।
- अपना ही राग अलापना- सदैव अपनी ही बात करना।
- आँधी के आम- बिना श्रम के प्राप्त वस्तु।
- आँख बिछाना- स्वागत करना।
- आँचल पसारना- भीख माँगना।
- आँखों में चर्बी छाना- अभिमान होना।
- आँख का पानी-लाज।
- अँगुली पर नचाना- तंग करना।
- आपे से बाहर होना- क्रोध करना।
- ईद का चाँद होना- लंबे समय के बाद दिखाई देना।

- अगर मगर करना- बातें बनाना।
- उलटी माला फेरना- बुराई या अनिष्ट चाहना।
- उलटी गंगा बहाना- नियम के विरुद्ध काम करना।
- अंगुली उठाना- दोष लगाना।
- उलटी खोपड़ी- मूर्ख।
- उलट-पुलट करना- गड़बड़ करना।
- औंधे मुँह गिरना- विफल होना।
- ओखली में सिर देना- जोखिम का काम करना।
- कंचन बरसना- बहुत-सा धन पाना।
- कलेजा ठंडा करना- स्वयं को संतोष देना।
- कान भरना- शिकायत करना।
- कन्नी काटना- सामने न आना।
- कान मसलना- सजा देना।
- कान काटना- नीचा दिखाना।
- कान खड़े होना- चौकन्ना होना।
- ख्याली पुलाव पकाना- मनमानी कल्पना करना।
- खटाई में पड़ना- उलझन में पड़ना।
- गाल बजाना- डींगें हाँकना।
- गागर में सागर भरना- थोड़े शब्दों में बहुत सार होना।
- गड़े मुर्दे उखाड़ना- पिछली बातें दोहराना।
- गर्दन पर छुरी फेरना- अत्याचार करना।
- गंगा नहाना- छुट्टी पाना।
- घाट-घाट का पानी पीना- अनुभवी होना।
- घुटने टेकना- हार स्वीकार करना।
- घोड़े बेचकर सोना- निश्चिंत हो जाना।
- चिराग लेकर खोजना- बहुत ढूँढ़ना।

इकाई- 3

1.
मुहावरे और कहावतें

मुहावरा

मुहावरा अरबी भाषा का शब्द है। अरबी में इसका अर्थ है बोलचाल या बातचीत में प्रयुक्त होने वाले वाक्यांश। यह वाक्यांश अपने वाच्यार्थ से भिन्न अर्थ देते हैं। अर्थात् अभिधा द्वारा स्पष्ट न होकर व्यंजना और लक्षणा द्वारा अर्थ प्रकट करते हैं। कुछ विद्वान इसे 'वाग्धारा' भी कहते हैं। अर्थात् वे वाक्यांश जो सामान्य अर्थ का बोध न कराकर किसी विलक्षण अर्थ का बोध कराते हैं, उन्हें मुहावरा कहते हैं।

इसके प्रयोग से भाषा में सरलता, सरसता, चमत्कार और प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। इसमें बात को बड़ी खूबसूरती के साथ कहकर सुनने वाले को समझाया जा सकता है और प्रभावित भी किया जा सकता है। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि जिस सुगठित शब्द समूह के प्रयोग से वाक्य में लक्षणा और कभी-कभी व्यंजनात्मक प्रभाव पैदा किया जा सके उसे मुहावरा कहते हैं।

डॉ. उदय नारायण तिवारी के अनुसार, ''हिंदी-उर्दू में लक्षणा अथवा व्यंजना द्वारा सिद्ध वाक्य को ही मुहावरा कहते हैं।''

डॉ. मनोहर लाल गौड़ ने लिखा है, ''मुहावरे लोकमानस की चिर संचित अनुभूतियाँ हैं। उनके प्रयोग से भाषा की सजीवता की वृद्धि होती है। मुहावरे भाषा के प्राण हैं।''

मुहावरे की विशेषताएँ

1. मुहावरा के असली स्वरूप को बदला नहीं जा सकता अर्थात पर्यायवाची शब्दों में अनूदित नहीं किया जा सकता।
2. मुहावरा अपने आप में स्वतंत्र अर्थात पूर्ण वाक्य नहीं होते।
3. मुहावरा का प्रयोग प्रसंग के अनुसार होता है।

सप्रयोजन भी होते हैं। इन लोकनाट्यों में कुछ उल्लेखनीय नाट्य निम्नांकित

गम्मत- गम्मत निमाड़ी जन-जीवन के मनोरंजन का सबसे बड़ा साधन गम्मत में जीवंत व्यंग्य का समावेश होता है। समाज की सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक बुराइयों पर विद्रोह की अभिव्यक्ति के द्वारा चोट करना गम्मत का खास काम है। बुंदेली में स्वाँग, छत्तीसगढ़ी में नाचा, महाराष्ट्र में तमाशा का जो है, वही गम्मत का निमाड़ में है। विशेषकर नवरात्र में गाँव-गाँव में गम्मत की है। गम्मत का मंच चारों ओर खुला होता है। बीच में एक खंभा गाड़कर उ चारों ओर कपड़े का चंदोबा तान देते हैं और इसी के नीचे गम्मत खेला जाता गम्मत में एक विदूषक होता है, जो अपने हाव-भाव से दर्शकों को हँसाता पारंपरिक रूप से गणेश और सरस्वती वंदना के बाद नर्तकी का नाच और में प्रमुख गम्मत शुरू होती है। गम्मत शुद्ध मनोरंजन के साथ समसामयिक घटना की व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति भी है। हास्य और व्यंग्य इसकी अपनी विशिष्टता इसमें मृदंग और झाँझ प्रमुख वाद्ययंत्र होते हैं।

रासलीला- भाद्र पक्ष में कृष्ण जन्माष्टमी के आसपास निमाड़ के गाँवों रासलीला का आयोजन किया जाता है। कृष्ण लीला की विभिन्न प्रसंगों की प्रस्तु रासलीला में की जाती है। मुख्य रूप से कृष्ण जन्म, माखन चोरी, कंस वध प्रसंग रासलीला में किये जाते हैं।

निमाड़ी प्रकीर्ण साहित्य या लोक सुभाषित

मुहावरे- निमाड़ी के कुछ चर्चित मुहावरे हैं-

1. कम्मर तोड़नो - मुसीबत कर देना
2. मन म रखनो - सबसे छुपाना
3. कलेजा खाणो - कष्ट देना

निमाड़ी लोकोक्तियाँ

1. एक तवा की रोटी, काई छोटी, काई मोटी। **अर्थ**- सबकी अ पहचान।
2. दया को मूल धरम,पाप को मूल भरम- **अर्थ**- दया में ही धर्म भ्रम में पाप निहित होता है।

बघेली लोक सुभाषित

मुहावरे- लोक में लाक्षणिकता के माध्यम से अर्थपूर्ण बात कह दी जाती है, इसके लिए सारगर्भित शब्दों का प्रयोग किया जाता है। कुछ उदाहरण-

1. मुँह चोराउब- मतलब निकल जाने के बाद मुँह चुराना।
2. अगिया बइताल- लड़ाकू प्रवृत्ति का होना।

कहावतें-

1. घरे के महुआ बिना ना जाय महुआ बिनन पहारे जाय।

अर्थ- पास का काम न कर पाना और दूर-दूर का ठेका लेना।

2. घरे के लड़िका गोही चाटय, मामा अमावट खाँय।

अर्थ- घर के लोगों को रूखा-सूखा मिलना और बाहर वालों के लिए अच्छा अच्छा पकवान खिलाना।

3. भंइस के आगे बीन बाजय, भंइस खड़ी पगुराय।

अर्थ- किसी को समझाते रहना लेकिन उस पर कोई प्रभाव न पड़ना।

4. सेत का चन्दन, घिस मोरे नंदन।

अर्थ- मुफ्त में मिले माल का खूब उपयोग करना।

पहेलियाँ- कूटपद, प्रहेलिका, बुझौवल, अटका, ढकोसला आदि पहेलियों के अन्य नाम हैं। पहेली संकेतात्मक होती हैं। यह जिज्ञासा, ज्ञान और कौतूहल बढ़ाने और मन-रंजन की विधा है। यह लोक से उपजती है और समय सापेक्ष होती है। बघेली में पहेलियों को जनउला भी कहा जाता है। जैसे-

1. अरिया मा लोलारिया झाँके (जीभ)
2. उज्जर कुकरी का हरियर पूँछ (मूली)
3. सात चिरई सात रंग डारे बैठिन ता एकई रंग (इन्द्रधनुष)
4. पहार उपर तुतुरू बोले दमकत निकलैय राजा (सूर्योदय)

निमाड़ी लोक साहित्य

अपनी धरा में लोक साहित्य की अन्त: सलिला को प्रवहमान रखे हुए निमाड़ अंचल सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत समृद्ध है। वाचिक परंपरा की धरोहर को अक्षुण्ण रखने वालों में संत जगन्नाथ गीर, संत सिंगाजी, संत भावसिंह का योगदान अमूल्य

है। निमाड़ को आज संत सिंगाजी के नाम से जाना जाता है। निमाड़ी लोक साहित्य को निम्न शीर्षकों में देखा जा सकता है-

निमाड़ी लोकगीत

संस्कार गीत- विवाह के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों में बधाई गीतों की संख्या सबसे अधिक है। गणपति गीत से प्रारंभ होकर तिलक गीत, कुकड़ा गीत, साँजुली गीत, बनरा गीत, वर स्नान का गीत, पूर्वजों की स्मृति में गाये जाने वाले गीत, बाने का गीत, मंडप का गीत, भात का गीत, विदा गीत उल्लेखनीय हैं। बनरा के गीत की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

'म्हारी चांदणी पर चौसर खेलण आवजो बना म्हारो हलदी भइयो अंग'

गणगौर के गीतों में रणुदेवी और धणियेर जी का उल्लेख अधिक मिलता है। रणुदेवी को रणुबाई कहकर संबोधित किया जाता है जैसे-

'थारो काई काई रूप बखाण रणु बाई सोरठ देस से आइयो'

जन्म संस्कार गीत- गर्भाधान से लेकर संतान के जन्म तक इन गीतों की सम्पदा निमाड़ में बिखरी पड़ी हुई है। ये गीत पारिवारिक संबंधों की ऊष्मा से भरे हुए हैं। इनके साथ ही ऋतु गीत, पुरुषों द्वारा गाये जाने वाले गीत, जैसे बिरहा, फाग, लावनी, मृत्यु गीत विशिष्ट हैं। व्रत-उत्सव के गीत, श्रम गीत, बाल लोकगीत, जैसे नरवत, सिंगा जी, तुलसा, भीलटदेव के गीत आदि भी उल्लेखनीय हैं।

निमाड़ी लोकगाथा- इनमें ढोला-मारू की कथा, काजल रानी की कथा, भीलट देव की कथा हैं जो लोक से उपजी हैं। इनके साथ ऐतिहासिक गाथाएँ भी गायी जाती हैं, जैसे-रायसल गाथा, राजा चैनसिंह की कथा, खाण्डेराव और अहिल्या की गाथाएँ भी प्रसिद्ध हैं।

निमाड़ी लोक कथा- इन लोककथाओं में धर्म कथाएँ- जैसे- ऋषि पंचमी की कथा, हरतालिका की कथा, सती अनुसुइया की कथा, पशु-पक्षी सम्बन्धी कथा, नीति कथा, जैसे- चन्दन आरू खाखरो, साधू-संतों की कथा, वीरकथा, ऐतिहासिक कथा, अतिलौकिक कथा, जैसे- परियों और अप्सराओं की कथा, बाल-कथा, जैसे- जादू की अँगूठी। इन कथाओं की ये विशेषता होती हैं कि एक कथा कहने वाला होता है और दूसरा हुँकारा भरने वाला।

निमाड़ी लोकनाट्य- लोकजीवन के विविध सन्दर्भ, परिवेश के विसंगतियाँ निमाड़ी लोकनाट्य में समाहित हैं। इनमें केवल लोकरंजन ही नहीं बल्कि ये नाट्य

बघेली लोक सुभाषित

मुहावरे- लोक में लाक्षणिकता के माध्यम से अर्थपूर्ण बात कह दी जाती है, इसके लिए सारगर्भित शब्दों का प्रयोग किया जाता है। कुछ उदाहरण-

1. मुँह चोराउब- मतलब निकल जाने के बाद मुँह चुराना।
2. अगिया बइताल- लड़ाकू प्रवृत्ति का होना।

कहावतें-

1. घरे के महुआ बिना ना जाय महुआ बिनन पहारे जाय।

अर्थ- पास का काम न कर पाना और दूर-दूर का ठेका लेना।

2. घरे के लड़िका गोही चाटय, मामा अमावट खाँय।

अर्थ- घर के लोगों को रूखा-सूखा मिलना और बाहर वालों के लि अच्छा अच्छा पकवान खिलाना।

3. भंइस के आगे बीन बाजय, भंइस खड़ी पगुराय।

अर्थ- किसी को समझाते रहना लेकिन उस पर कोई प्रभाव न पड़ना

4. सेत का चन्दन, घिस मोरे नंदन।

अर्थ- मुफ्त में मिले माल का खूब उपयोग करना।

पहेलियाँ- कूटपद, प्रहेलिका, बुझौवल, अटका, ढकोसला आदि पहेलि के अन्य नाम हैं। पहेली संकेतात्मक होती हैं। यह जिज्ञासा, ज्ञान और कौतूहल ब और मन-रंजन की विधा है। यह लोक से उपजती है और समय सापेक्ष होती बघेली में पहेलियों को जनउला भी कहा जाता है। जैसे-

1. अरिया मा लोलारिया झाँके (जौ
2. उज्जर कुकरी का हरियर पूँछ (मू
3. सात चिरई सात रंग डारे बैठिन ता एकई रंग (इन्द्रध
4. पहार उपर तुतुरू बोले दमकत निकलैय राजा (सूर्यो

निमाड़ी लोक साहित्य

अपनी धरा में लोक साहित्य की अन्त: सलिला को प्रवहमान रखे हुए नि अंचल सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत समृद्ध है। वाचिक परंपरा की धरोहर को अ रखने वालों में संत जगन्नाथ गीर, संत सिंगाजी, संत भावसिंह का योगदान अ

लोकगीत के प्रकार	प्रमुख बिंदु
संस्कार गीत	1. मनुष्य के जीवन से जुड़े प्रत्येक संस्कार के लिए बघेली में लोकगीत मिलते हैं। 2. जन्म से लेकर सोहर, मुंडन, यज्ञोपवीत, विवाह, गौना और मृत्यु संस्कार-सभी के लिए लोकगीतों का गायन होता है। 3. माटी माँगर, मातृकापूजन, छिरा उतराई, रिसाई गीत, जेवनार पर गारी गीत, परछन् के गीत आदि इनमें प्रमुख हैं।
ऋतु गीत	बारामासी, कार्तिक स्नान के गीत, कजरी, फाग-गीत, भगत-गीत आदि।
क्रिया गीत	टप्पा गायन, पनघट के गीत, चक्की के गीत आदि।
जातीय गीत	कहार-कोरी गीत, कोल-कोरी गीत, नाऊ-बारी गीत अहीर-गीत, धोबी-गीत आदि।

इनके अतिरिक्त बाल खेल गीत भी मिलते हैं, जैसे- तुआ, पुतरा-पुतरी, अतील-बतील, डंढिया आदि। तुआ खेलगीत का एक उदाहरण है-

हुर कबड्डी आन दे, तबला बजान दे
तबला माहीं टौंका, लाल पिलौंटा, लाल पिलौंटा

बघेली लोकगाथा- इनमें पारंपरिक गाथाओं के साथ ही जातीय लोकगाथाओं का भी प्रचुर भण्डार है। श्रवण कुमार, कर्ण, मोरध्वज, गोपीचंद, भरथरी जैसे ऐतिहासिक और पौराणिक पात्रों के साथ ही कुसुमादेवी की गाथा और नैक हाई केर जुल्झ का पंवाड़ा भी इस क्षेत्र की लोकप्रिय गाथाएँ हैं। कुसुम देवी की गाथा से कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

बाबा के सगरवा चली करै असननवा,
हाथ लिए सोने के घइलवा हो राम.....
घेड़वा चढ़ल आवइ एक रे तुरुकवा,
गोरिया के रूप लोभाइल हो राम.....
पकरि तुरुका घोड़वा चढ़ावै,
टुप टुप चूवै अँसुइयाँ हो राम.....

(लोक संस्कृति- अवधारणा और तत्त्व, पृष्ठ- 29)

बघेली लोककथा- इन लोककथाओं में अतिलौकिक जैसे पशु और परी कथाएँ, धार्मिक और पुराकथाएँ, साहसिक कथा वृत्तांत एवं व्रत-उपवास सम्बन्धी कथाएँ उल्लेखनीय हैं। इनमें केउटी का घोड़ा, हिरनी और महागनी कौशल्या की कथा, मूसरचंद की कथा, गदेलई तथा बाप पूत की लोककथा प्रसिद्ध हैं।

बघेली लोकनाट्य

नाट्यरूप	विशेषताएँ
छहुर नाट्य	1. अहीर, तेली और कुम्हार जातियाँ विशेष रूप से इस नाट्य को करती हैं। 2. दीपावली से गोप अष्टमी तक किया जाता है। 3. पुरुष ही स्त्री भूमिकाएँ भी निभाते हैं।
मनसुखा नाट्य	1. यह प्रहसन शैली का नाट्य है। 2. कृष्ण के एक मित्र मनसुखा के पात्र पर केन्द्रित होता है। 3. सभी प्रमुख त्यौहारों पर खेला जाता है।
हिंगोला नाट्य	1. इसमें हिंगोला देवी की स्तुति की जाती है। 2. इसमें किसी औपचारिक मंच की जरूरत नहीं होती, कहीं भी इसे खेल सकते हैं।
जिन्दबा या नटकोरी नाट्य	1. केवल स्त्रियाँ ही इसे खेलती हैं और प्रायः विवाह के अवसर पर किया जाता है। 2. हास-परिहास के साथ गीत गायन और अभिनय किया जाता है। 3. यदि पुरुष इसे देख लेते हैं तो उनकी पिटाई झाड़ू और मूसल से की जाती है, बुन्देली में जिसे नकटौरा के नाम से जाना जाता है ये भी उसी प्रकार का है।
लकड़बग्घा नाट्य	1. प्रमुख रूप से आदिवासी युवा इसे खेलते हैं। 2. इसमें पशु-मनुष्य के संघर्ष और सह अस्तित्व का भाव निहित है।

ऋतु गीत	वर्षाकाल और बसंत ऋतु में गाये जाने वाले गीत।
पारिवारिक संबंधों पर केन्द्रित गीत	पति-पत्नी, सास-बहू, देवर-भाभी, भाई-बहिन, देवरानी-जिठानी के गीत प्रमुख हैं।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इन गीतों के अतिरिक्त माच, हीड़, कीर्तन, लावणी ऐसे लोकगीत हैं जिन्हें केवल पुरुष ही गाते हैं।

मालवी लोकगाथाएँ

1. **राजा भरथरी की लोकगाथा**- मालवा में अनेक गाथाएँ और पँवाड़े गाये जाते हैं जिनमें भरथरी का उल्लेख किया जाता है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

पेलाँ समरू देवी सारदा हो राजा, गणपत लागूँ मैं पाँव, राजा भरथरी।
बोले राणी-सुनो भरथरी म्हारी बात, जीवलो जीवो हो राज।

2. **हीड़**- यह लोकगाथा दिवाली के त्यौहार पर गाई जाती है। इसमें गायों को पालने वालों की जीवन-कथा का गायन होता है। देवनारायण गूजर इस लोकगाथा के गायक हैं। इसे दो प्रकार से गाया जाता है- बैलों की पूजा करते समय जो हीड़ गाई जाती है, उसे 'घौल्या की हीड़' कहते हैं और 'चालर की हीड़' में गूजर जाति के इतिहास का वर्णन होता है।

3. **बालाबऊ**- मालवा के उज्जैन, देवास और शाजापुर जिलों में जन के लिए अपनी जान न्यौछावर करने वाले वीर सपूतों का स्मरण किया जाता है। इनमें से एक कुँवर और उनकी पत्नी बालाबऊ थे जिन्होंने अपनी बलि देकर गाँव के तालाब पानी से भर दिए। बालाबऊ की गाथा बहुत करुणा से भरी है। इसके साथ ही जब आषाढ़ मास में वर्षा नहीं होती या विलम्ब से होती है, तब भी स्त्रियाँ एकत्रित होकर इसका गायन करती हैं।

मालवी लोककथा- लोकमानस के मनोरंजन के साथ ही उन्हें नैतिकता की सीख देने के लिए अनेक लोक कथाएँ मालवा में प्रचलित हैं, जैसे- राजा विक्रमादित्य की न्यायप्रियता की कहानियाँ, पिंगला और भरथरी की कथाएँ आदि।

मालवी लोकनाट्य- पूरे मालवा क्षेत्र में सबसे अधिक प्रचलित लोकनाट्य माच ही है। भारतीय लोकनाट्य परम्परा में भी मालवा के माच का महत्त्वपूर्ण स्थान है। माच आज भी अपनी समृद्ध परम्परा के साथ लोकमानस का प्रिय मंच बना

हुआ है। मालवा के प्रचलित गरबी गीत, ढारा-ढारी के खेल, तुर्रा-कलंगी, नकल-स्वांग की प्रवृत्ति, गम्मत, हाजरात, विद्या आदि का माच के उद्भव और विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान है। ढारा-ढारी के खेलों से अभिनय, गरबा उत्सव से संगीत, तुर्रा कलंगी से काव्य गायन और स्वांग, नकल प्रदर्शनों से अभिनय हास-परिहास, चुटीले व्यंग्य एवं जन-मनोरंजन के तत्व जुटाकर माच कलाकारों ने लोकनाट्य के इस अद्भुत रूप का विकास किया है। यह नाट्यरूप गद्य और पद्य मिश्रित संवादों पर आधारित होता है। इसके अतिरिक्त नवरात्रि पर गरबा और विवाहादि अवसरों पर टूंटया जैसे लोकनाट्य भी खेले जाते हैं।

मालवी लोक सुभाषित- इनके अंतर्गत मुहावरे, लोकोक्ति और पहेलियाँ आती हैं। कुछ उदाहरण निम्नानुसार हैं-

मुहावरे- डोला खाना (घूमना-फिरना), माथा ठोकणो (पछताना)

लोकोक्ति- ऊँट-बैल को जोतणो (बेमेल जोड़ी), राम दे तो रामलाल नी खावा दे (किसी का हक छिन जाना)।

पहेलियाँ- जारे जा बजार म्हारी सूरत को आदमी लाव (दर्पण), धोरो खेत कारो बीज, वावा वारो गावे गीत (कागज़-कलम)।

बघेली लोक साहित्य

क्षेत्र की दृष्टि से सिंगरौली, उमरिया, अनूपपुर, रीवा, सतना, शहडोल तथा सीधी जिले बघेलखंड के अंतर्गत आते हैं।

बघेली लोक साहित्यकारों में कुछ उल्लेखनीय नाम हैं- अमोल बटरोही, बाबूलाल दाहिया, बैजनाथ पाण्डे, कालिकाप्रसाद त्रिपाठी आदि।

बघेली लोकगीत- बुंदेलखंडी के समीपवर्ती क्षेत्र रीवा, नागौद, सुहावल, कोठी तथा मैहर के इर्द-गिर्द बघेली लोकगीतों का क्षेत्र है। बीर पँवारे इधर बहुत चलते हैं। पद्यबद्ध बुझौवल और लोकोक्तियाँ भी खूब मिलती हैं। बुंदेलखंडी की तरह वीर-गाथाएँ भी लोक-गायकों द्वारा गाई जाती हैं। सोहर, विवाह-गीत, पँवारे, जनेऊ गीत, देवी के गीत, विदा गीत के अतिरिक्त इस क्षेत्र का अत्यधिक सरल गीत है दादरा- 'कहउँ होतिउँ बदरिया धुमड़ि रहते। 'बनाफरी', 'मरारी' तथा 'पँवारी' भी बघेलखंड की उपबोलियाँ हैं। इनके लोकगीत भी बघेली लोकगीतों की तरह ही होते हैं पर बोली एवं लहजे में थोड़ा अंतर आ जाता है।

		उदाहरण- भूरी भैंस, कचरिया, बाबूलाल।
भाँड़ भड़ेती	1.	बुन्देली की यह एक बहुत लोकप्रिय विधा है।
	2.	इसमें भाँड़ हास-परिहास के माध्यम से जीवन की विसंगतियों को प्रकट करते हैं।
कांडरा	1.	यह भक्तिप्रधान लोक नाट्य है , जिसका प्रदर्शन खुले मंच पर होता है।
	2.	विशेष रूप से धोबी जाति में यह खेला जाता है।
	3.	प्रमुख पात्र कृष्ण भगवान की वेशभूषा धारण करता है।
रहस	1.	बुंदेलखंड में रासलीला को ही रहस कहा जाता है।
	2.	कृष्ण कथा के प्रसिद्ध प्रसंग, जैसे- माखन-चोरी, चीर-हरण, कालिया मर्दन पर पात्र बहुत सुन्दर अभिनय करते हैं।
रामलीला	1.	प्रभु राम का सम्बन्ध बुंदेलखंड की धरा से रहा है, अतः रामलीला भी पूरी आस्था से यहाँ प्रदर्शित की जाती है।
	2.	रामचरित मानस के प्रसंगों पर आधारित होती है।
	3.	चौपाइयों के साथ ही संवाद भी होते हैं।
नौटंकी	1.	यह भी कथा, गीत, संगीत और अभिनय का मिश्रित रूप है।
	2.	पात्र मंच पर स्वयं ही गाते हैं और अभिनय भी करते हैं।
	3.	खुले मंच पर प्रदर्शन किया जाता है।
	4.	नक्कारा नौटंकी का प्रमुख वाद्य है। इसकी थाप से नाट्य की शुरुआत होती है।
	5.	इसमें गाये जाने वाले गीत छंदबद्ध होते हैं।
	6.	बुंदेलखंड की प्रसिद्ध नौटंकियाँ अमर वीर, हरदौल, आल्हा-ऊदल, श्रवण कुमार, सत्यवादी हरिश्चंद्र,पिंगला गणिका और भृतहरी आदि हैं।

बुन्देली लोक सुभाषित- इसके अंतर्गत बुन्देली कहावतें, मुहावरे और पहेलियाँ समाहित की जाती हैं।

कहावतें-

1. तुमाये मों में घी-सक्कर।
2. जरै पे फोरा पारबो।

पहेलियाँ-

1. काले पहाड़ पे गलगल बियानी
   जिसकी तेली खूब मिठानी। (लालटेन)
2. बइये कंकर उपजे जार
   फरे नीम फूले कचनार। (चना)

मालवी लोक साहित्य

मालवा में पुरातन काल से ही लोक साहित्य की वाचिक धारा प्रवहमान है। इन्हें मुखरित करने वाले कवि रोड, चन्द्रसखी का नाम इतिहास में दर्ज है। वर्तमान में भी अनेक लेखक और कवि मालवी लोक साहित्य की परंपरा को आगे बढ़ा रहे हैं। इनमें संत पीपा, आनंदराव दुबे, बालकवि बैरागी, नरहरि पटेल, शिव चौरसिया, हरीश निगम, पूनमचंद सोनी प्रमुख हैं।

मालवा के लोकगीत

नाट्यरूप		विशेषताएँ
संस्कार गीत	1.	जन्म-संस्कार के विविध अवसरों, जैसे- बधावा, जच्चा, अन्नप्राशन, मुंडन और नामकरण के अवसर पर गाये जाने वाले गीत।
	2.	विवाह के अवसर पर, जैसे- लगन, माण्डवा गाड़ना, दूल्हे को नहलाना, हल्दी-तेल चढ़ाना, तोरण मारना और कांकड़-डोरा छोड़ना आदि।
लोकदेवों और पूर्वजों के गीत	1.	अपने लोकदेवी-देवताओं के प्रति मालवी समुदाय बहुत आस्था रखता है। भेरू महाराज, तेजाजी आदि के गीत गाये जाते हैं।
व्रत-पर्व के गीत	1.	सावन सोमवार, संजा, नवरात्र, गणेशोत्सव, पूर्णिमा और

संतोष सिंह बुंदेली का लोक साहित्य, माधव शुक्ल 'मनोज' के 'अटके' और 'लटके' विधा के गीत उल्लेखनीय हैं।

साहित्य-रूपों के आधार पर निम्न शीर्षकों में परिचय दिया जा रहा है-

बुन्देली लोकगीत

प्रकार	विशेषताएँ
संस्कार गीत	मानव जीवन में जो भी संस्कार होते हैं, यथा- जन्म, छठी, दस्टोन, मुंडन, अन्नप्राशन, कर्णछेदन, विवाह, अनेक अवसरों पर लोकगीत गायन होता है, जैसे- हल्दी, चीकट, बनरी, द्वारचार, गारी आदि।
ऋतुगीत	विभिन्न ऋतुओं में भावपूर्ण और रसयुक्त गीत गाये जाते हैं, जैसे- मामुलिया, सुआटा, गरबा, नौरता, दिवारी आदि।
धार्मिक या भक्ति गीत	देवी-देवता सम्बन्धी गीत, भोला गीत, पद और भजन।
श्रम गीत	हाली, बिरहा, चरवाहा, गड़ेरिया गीत किसान गाते हैं वहीं स्त्रियाँ- चक्की या घट्टी के गीत, पनघट के गीत गाती हैं।

बुन्देली लोकगाथा- इनमें हरदौल की गाथा, प्रवीण राय की गाथा, ढोला-मारू गाथा, महारानी लक्ष्मीबाई की गाथा आदि प्रसिद्ध हैं।

बुन्देली लोक कथा- विविध त्यौहार, व्रत-उपवास और उत्सव के अवसर पर कहानियाँ कही जाती हैं, जैसे- संकट चौथ, करवा चौथ, हरछठ, हरतालिका तीज, जवारे, भैयादूज, चंदा-तरैया, धनतेरस, तुलसी विवाह, दिवारी, सुहागलें आदि।

लोकनाट्य

नाट्यरूप	विशेषताएँ
स्वांग	1. पुरुष और स्त्री दोनों ही इसमें भाग लेते हैं। 2. इसमें श्रृंगार और हास्य रस प्रधान चेष्टाएँ होती हैं। 3. नकटौरा ऐसा स्वांग है, जब बारात में पुरुष चले जाते हैं और उनकी अनुपस्थिति में केवल स्त्रियाँ ही अभिनय करती हैं।

होता है।'' (लोक संस्कृति, बसंत निरगुणे, पृष्ठ- 112)

3. **लोककथा**- ये लोकरंजन का एक विशिष्ट माध्यम हैं। लोककथा अपने भीतर अपने परिवेश को समाहित किये हुए होती हैं और इस प्रकार समय का प्रतिबिम्बन भी करती हैं। ये वाचिक परंपरा का प्रतिनिधित्व करती इनका आधार काल्पनिक और ऐतिहासिक होता है।

4. **लोकनाट्य**- पारंपरिक संगीत, नृत्य और अभिनय और कथा सूत्र लेकर लोकनाट्य बुने जाते हैं। ये प्रायः धार्मिक, ऐतिहासिक या सामाजिक पृष्ठ पर आधारित होते हैं। इनमें स्थानीय बोली का प्रयोग होता है।

5. **लोक सुभाषित**- ये वे अनमोल रत्न होते हैं जो लोक मानस के अनुभव, विचार और जीवन-दर्शन के समुद्र से निःसृत होते हैं। जब भी मनु कुछ गहन विचार किया होगा, उसके मुख से स्फुट शब्द निकले होंगे, इन्हीं ने लोक सुभाषित का रूप धारण कर लिया होगा। विशिष्ट उक्तियाँ, लोक पंक्तियाँ, ज्ञान-परीक्षा के लिए कही गयी पहेलियाँ लोक मानस के ही उद्गा हैं। इन्हें प्रकीर्ण साहित्य भी कहा जाता है।

मध्यप्रदेश के लोकसाहित्य को क्षेत्रीय आधार और अध्ययन की सुवि लिए चार भागों में विभक्त किया जा सकता है-

1. बुन्देली लोक साहित्य।
2. मालवी लोक साहित्य।
3. बघेली लोक साहित्य।
5. निमाड़ी लोक साहित्य।

अब हम क्रमशः इनका विश्लेषण करेंगे।

बुन्देली लोक साहित्य

1023 ई. में देशी भाषा बुन्देली में साहित्य रचना का प्रारम्भ हुआ नर्मदाप्रसाद गुप्त का कथन उल्लेखनीय है, ''बुन्देली का उद्भव अन्य लोक के उदय के डेढ़-दो सौ वर्ष पहले हो चुका था..... उसके दो रूप सदैव रहे एक परिष्कृत बुन्देली का साहित्यिक रूप और दूसरा ग्रामीण बुन्दे लोकरूप। इन दोनों रूपों में निरन्तर सृजन होता रहा।'' (बुन्देली लोक परम्परा और इतिहास)। बुन्देली की उत्कृष्ट रचनाओं में- जगनिक कृत ईसुरी के फाग, कवि गंगाधर, घासीराम व्यास, नरोत्तम पाण्डेय, नर्मदाप्रसा

3.
मध्यप्रदेश का लोक साहित्य
(संकलित)

लोक साहित्य लोक की वह अकृत्रिम अभिव्यंजना है, जिसमें उसकी संस्कृति और जन-मन प्रवाहशील होता है। लोक साहित्य सहज और नैसर्गिक होता है। लोक मन का अनुनाद, स्वर, कहानी, अभिनय और दर्शन सब कुछ लोक-परंपरा में अंतर्ग्रथित है। लोक साहित्य को निम्न आयामों में देखा जा सकता है-

1. लोकगीत
2. लोकगाथा
3. लोककथा
4. लोकनाट्य
5. लोक सुभाषित

संक्षिप्त परिचय

1. **लोकगीत**- श्री वसंत निरगुणे की टिप्पणी है ''लोकगीत लोक संस्कृति के समग्र संवाहक हैं। लोकगीत किसी जाति, समूह, देश की लोक संस्कृतियों के परिचायक होते हैं, उनमें जीवन की प्रत्येक धड़कनों का एहसास देखा जा सकता है...लोकगीत जीवन का स्फुट काव्य है...लोकगीत समूहगत रचनाशीलता का परिणाम है।'' (लोक संस्कृति, पृष्ठ संख्या-109)। वहीं श्री देवेन्द्र सत्यार्थी का कथन है- ''लोकगीत किसी संस्कृति के मुँह बोलते हुए चित्र हैं। लोकगीत प्रकृति के उदगार हैं। प्रकृति जब तरंग में आती है, गान करती है।'' (मध्यप्रदेश का लोक संगीत, पृष्ठ संख्या-195)

2. **लोकगाथा**- यह गीत और कथा का सम्मिश्रण होती है। अँग्रेजी साहित्य में इस साहित्य रूप को Ballad कहा जाता है। इसमें कथा, गायन, नृत्य, अभिनय और संगीत समाविष्ट रहता है। ये अपने अंचल के संस्कारों को अपने पात्रों, कथानक और घटनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं। ''लोकगाथा अपने आप में सम्पूर्ण काव्यगाथा होती है, जिसमें मूल लोक के भावों का प्रस्फुटन तीव्रता से

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न-

निम्न में से किसी एक विकल्प का चयन कीजिए-

1. लोक कला के कितने रूप होते हैं-
   (क) दो (ख) पाँच
   (ग) तीन (घ) चार
2. क्षेत्रीय आधार पर मध्यप्रदेश की लोक कलाओं को कितने भागों में किया जा सकता है-
   (क) तीन (ख) पाँच
   (ग) चार (घ) छह
3. जिरौती कला का सम्बन्ध किस स्थान से है-
   (क) मालवा (ख) बुंदेलखंड
   (ग) बघेलखंड (घ) निमाड़
4. बघेलखंड का प्रसिद्ध नृत्य है-
   (क) दादर (ख) सैरा
   (ग) मटकी (घ) मांडल्या
5. मामुलिया चित्रकला किस क्षेत्र की विशेषता है-
   (क) बुंदेलखंड (ख) बघेलखंड
   (ग) मालवा (घ) निमाड़

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. कानड़ा नृत्य की क्या विशेषता है?
2. मालवा में कौन-कौन से लोक चित्र बनाये जाते हैं?
3. निमाड़ के गणगौर लोकनृत्य पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. बघेलखंड के लोकचित्रों का सोदाहरण वर्णन कीजिये।
2. जनजातीय लोकशिल्प पर प्रकाश डालिए।
3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिये-
   (क) मालवा के लोकनृत्य

किये जाते हैं, पिथोरा कहलाते हैं। इन चित्रों में केन्द्र का भाग विशेष महत्व
हैं, जहाँ पिथोरो के घोड़े को छोटी-छोटी बिन्दियों अथवा रेखाओं द्वारा विशेष
से अलग करके दिखाया गया है।

गोदना- मध्यप्रदेश की सभी जनजातियों में गोदने का प्रचलन है। प्राय
आदिवासी स्त्रियाँ अपने देह पर अनेक प्रकार के गोदने बनवाती हैं जिनके
रूप निम्नांकित हैं-

बैगा जनजाति- महिलायें पूरी देह पर मोटी रेखाओं से गोदना बनवा
और माथे पर वही आकार का चूल्हा गुदवाती हैं।

गोंड जनजाति- गोंड स्त्रियाँ माथे, बाँह, वक्ष और पिंडलियों पर
कलात्मक बिन्दुओं का गोदना बनवाती हैं।

भारिया जनजाति- इनके गोदने विशिष्ट होते हैं। भवों (भौंहों) पर धनुष
रेखा, माथे पर वही आकार, हाथ पर फूल, बिच्छू आदि के गोदने बनवाये
और पुरुष दोनों ही गुदवाते हैं। आम, मोर, चौक की आकृतियाँ भीलों के
गोदने हैं।

कोरकू-मवासी- इनके माथे पर एम आकार का गोदना होता है जि
दोहरा चूल्हा कहते हैं। नाक पर बिंदु, ठोड़ी पर तीन टिपकी, हाथ पर चौक,
मोर, मोरमुकुट, बाहों पर बाजूबंद, सिंहासन आदि इनके विशिष्ट गोदने हैं।

सहरिया- इनमें सीता चौक, सीता रसोई, मूठी फूल और सर पर अर्ध
की आकृति गुदवाई जाती है।

लोकनृत्य

जनजाति	नृत्य
गोंड	करमा, सैला, सुआ, कहरवा, बिरहा,भड़ौं
बैगा	करमा, सैला, परघौनी, फाग
भील	भगोरिया, गवरी, बड़वा, डोहा
कोरकू	थापरी, ढांडल
कोल	कोलदहकी
भारिया	करमा, सैला, सैतम
सहरिया	लूर, लहँगी, दुल-दुल घोड़ी

	मांगलिक कार्य	हैं। 3. स्त्री-पुरुष दोनों नृत्य करते हैं लेकिन नाचने का ढंग दोनों का अलग होता है। स्त्रियाँ चकरी लगाते हुए जबकि पुरुष स्वतंत्र रूप से नाचते हैं। 4. ढपला और बांसुरी मुख्य वाद्य होते हैं।
कलसा	नृत्य विवाह	1. यह भी एक जातीय नृत्य है। 2. बारात की अगवानी करने और द्वारचार होने के बाद पुरुष वर्ग अपने सर पर सात कलसे (कलश) रखकर संतुलन-कला का विशेष प्रदर्शन करते हैं। ये कलसे क्रमशः बड़े से छोटे होते जाते हैं। 3. धोती, बंडी, साफा और झब्बेदार घुँघरू नर्तकों के विशेष परिधान और आभूषण होते हैं।

लोक शिल्प

खराद शिल्प- यह एक प्राचीन कला है, जो रीवा जिले की विशेषता है। सागौन, कदम्ब, खैर जैसे वृक्षों की लकड़ी पर रंगों से निर्माण किया जाता है। खराद कला में रंग-बिरंगे खिलौने एवं सजावट की सामग्री बनाई जाती है।

धातु शिल्प- सतना में काँसे के द्वारा अनेक बर्तन, बटलोई आदि बनाये जाते।

सुपारी शिल्प- रीवा में सुपारी पर मूर्तियाँ उकेरी जाती हैं साथ ही सजावट का सामान बनाया जाता है।

जनजातीय लोककला

लोककलाओं के विषय में जानने से पूर्व इन जनजातियों के क्षेत्र से परिचित हो लेते हैं-

गोंड- इनका निवास बैतूल, होशंगाबाद (अब नर्मदापुरम), मंडला, सागर,

भील- इनका निवास मुख्यतः झाबुआ, अलीराजपुर, धार, बड़वानी, खरगौन एवं रतलाम में है। भील अपने आपको वाल्मीकि और एकलव्य का वंशज मानते हैं। इनकी कई उप जातियाँ, जैसे- भिलाला, बारेला एवं राठवा हैं। टंट्या भील भारत के स्वतंत्रता संग्राम के उल्लेखनीय स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी हैं।

कोरकू और मवासी- यह जनजाति मध्यप्रदेश के सतपुड़ा पर्वतमाला क्षेत्र के छिंदवाड़ा, बैतूल, नर्मदापुरम जिले के विभिन्न गाँवों में निवास करती है।

बैगा जनजाति- ये मुख्यतः मंडला, डिंडोरी, शहडोल, उमरिया, बालाघाट एवं अमरकंटक के वन प्रदेशों में रहते हैं। बैगा जनजाति को छोटा नागपुर क्षेत्र की भूमियाँ जनजाति से निकली एक शाखा माना जाता है।

कोल- मध्यप्रदेश की दूसरी सबसे बड़ी जनजाति है एवं इसकी 22 उपशाखाएँ हैं।

भारिया- ये मुख्यतः जबलपुर एवं छिंदवाड़ा जिले में निवासरत हैं।

सहरिया- ये मध्यप्रदेश के शिवपुरी, गुना, ग्वालियर, मुरैना, भिंड, विदिशा, रायसेन, सीहोर एवं नर्मदापुरम जिलों में निवास करते हैं।

लोकचित्र

पिथौरा- मध्यप्रदेश के भीलों की राठवा जनजाति का विश्वास है कि संसार की सृष्टि पहली वर्षा और पृथ्वी के संयोग से हुई। विश्व की अनेक प्राचीन सभ्यताओं की तरह उनके गीतों में चार महाद्वीप वाली रानी पृथ्वी और इंदीराजा का वर्णन है जो स्वर्ग में रहता है। इस प्रकार पृथ्वी को माता और आकाश को पिता मानकर उनके साहित्य और कला की रचना हुई है। भीमबेटका की पाषाण गुफाओं में बने हुए चित्र इन पौराणिक अवधारणाओं के बहुमूल्य ऐतिहासिक प्रमाण हैं। इन लोकचित्रों में बैल और गाय भी प्रमुखता के साथ चित्रित किये गए हैं। जंगल, सागर, बादल, अंधे और लंगड़े प्राणियों को भी कला का विषय बनाया गया है। घोड़ों का हर स्थान पर बहुत महत्त्व के साथ चित्रण हुआ है। उन्हें दौड़ते हुए और आकाश में उड़ते हुए दिखाया गया है। वे आदमियों, भैंसों, हलों, गायों, पेड़ों, नगाड़े बजाने वालों और चीतों के साथ भीड़ में जुलूस की तरह दिखाए गए हैं। आज भी इस जनजाति में विवाह जैसे शुभ अवसरों पर घर के भीतर के कमरे में देवता की स्थापना की जाती है तथा दीवारों पर पारंपरिक नियमानुसार पिथोरो देव के चित्र अंकित किये जाते हैं। ये सभी चित्र जो पिथोरो के सम्मान में अंकित

कलाओं के लिए भी जाना जाता है।

लोक चित्र

मोरइला- ये भित्तिचित्र होते हैं जिनमें अनेक रंगों का प्रयोग किया है। इनमें मयूर की विविध रूप आकृतियाँ दीवाल पर उकेरी जाती हैं।

बरायन या दहेंगर- विवाह मंडप में ये शिल्प विवाह की शोभा बढ़ा

कोहबर- इनका अंकन भी विवाह संस्कार में किया जाता है। भित्तिचित्र होते हैं।

तिलंगा- चारकोल या कोयले को तिल के तेल में मिलाकर तिलं भित्तिचित्र बनाया जाता है।

छठी चित्र- शिशु जन्म के अवसर पर यह चित्र बनाया जाता है। इ के आरेखन में गेरू का प्रयोग किया जाता है। दीवाल पर छठी माता की बनाकर उनका पूजन किया जाता है।

लोकनृत्य

नाम	पर्वोत्सव/संस्कार	प्रमुख बिंदु
बिरहा नृत्य	विवाह और दीपावली	1. पुरुष बिरहा गीत गाते हुए तीव्र ताल पर नृत्य करते हैं। 2. सवाल और जवाब की शैली में किया जाता है। 3. अहीर, तेली, गड़रिया और बा में विशेष रूप से यह नाच कि है।
कैमाली नृत्य	विवाह	1. स्त्री और पुरुष साजन-सजनई में प्रश्नोत्तर शैली में अत्यंत तीव्र नाचते हैं। इस नृत्य को साज नृत्य भी कहा जाता है। 2. यह विशेष रूप से चर्मकार लोक-संस्कृति का अंग है।

फेफरिया नृत्य	विवाह
	1. फेफरिया पारंपरिक समूह नृत्य है। इस स्त्री और पुरुष जोड़ी बनाकर गोल में नाचते हैं।
	2. फेफरिया वाद्य के कारण इस नाच नाम फेफरिया नृत्य पड़ा। यह वाद्य शहन से मिलता-जुलता वाद्य है।
	3. यह नृत्य मुख्यत: विवाह के अवसर किया जाता है।
मांडल्या नृत्य	1. एक पारंपरिक समूह नृत्य है। इसमें ए पुरुष ढोल बजाता है।
	2. संगत में काँसे की थाली का तीव्र स नृत्य को अधिक उत्तेजक बनाता है।
	3. मांडल्या नाच महिला परक है, महिल ढोल की थाप पर जल्दी-जल्दी ग बदलती हैं तथा हाथ और पैरों विभिन्न मुद्राओं को प्रदर्शित करती

लोक शिल्प

निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास समृद्ध और गौरवशाली रहा है। यहाँ शिल्पकला पीढ़ी दर पीढ़ी जातियों के माध्यम से हस्तांतरित होती रही है। इस अं की प्रमुख शिल्प कलाएँ निम्नानुसार हैं, जैसे-

मिट्टी शिल्प- कुम्हार घड़े, दीये बर्तन जैसी उपयोगी वस्तुओं के अतिरि खिलौने, मूर्तियों आदि कलात्मक माटी शिल्प का निर्माण भी करते हैं।

काष्ठ शिल्प- निमाड़ में काष्ठ शिल्प का कार्य पारम्परिक रूप से सुतार ज के लोग करते हैं। लकड़ी के खिलौने, मूर्तियाँ, कलात्मक दरवाजे, खिड़कि चौखटें, विवाह-खंभ, चिड़िया, सिंधोरा, खेती के औजार, फर्नीचर आदि का नि दक्ष काष्ठ शिल्पी करते हैं। इन पर सुन्दर नक्काशी करने की परिपाटी निमाड़ बहुत पुरानी है। काष्ठ स्तम्भों, पाटों पर विभिन्न पशु-पक्षियों, मानवाकृतियों बेलों-फूलों को उकेरा जाता है।

निमाड़ी लोककला

निमाड़ मध्यप्रदेश का पश्चिमी क्षेत्र है। इसकी भौगोलिक सीमाओं में
तरफ़ विन्ध्य पर्वत और दूसरी तरफ़ सतपुड़ा है, जबकि मध्य में नर्मदा नदी
पौराणिक काल में निमाड़ अनूप जनपद कहलाता था बाद में इसे निमाड़ की
दी गयी। (साभार- bhartdiscovery.org) इसे मालवा के ही एक विशिष्ट अं
की तरह भी मान सकते हैं। इस क्षेत्र की प्रमुख लोक कलाएँ अग्रलिखित

लोक चित्र

चित्रकला का नाम	पर्व-त्यौहार, संस्कार	विशिष्टताएँ
थापा	सेली सप्तमी	हाथ से थापा लगाया जाता है।
खोपड़ी पूजा	देवउठनी ग्यारस	खोपड़ी पूजन किया जाता है।
ईरत	विवाह	कुलदेवी का चित्र दीवाल पर ब जाता है।
पगल्या	जन्म	पहले शिशु के जन्म पर शुभ सन्देश को अंकित किया जाता
काँचली भरना	विवाह	वर-वधू के सर पर काँचली जाती है।
जिरोती	हरियाली अमावस्या	दीवाल पर चित्र बनाये जाते है

लोक नृत्य

नाम	पर्व-अवसर	प्रमुख बिंदु
गणगौर	चैत्र मास की सप्तमी	1. शिव-पार्वती की आराधना की जा 2. विवाहित महिलाएँ रंग-बिरंगे प और आभूषणों को धारण कर स अपने घरों और मुहल्लों से निक 3. जलाशय, पनघट या नदी किना होकर पूजा की जाती है और भाव से नृत्य करती हैं।

आँगन चौक (दशहरा), मांडणा और रंगोली (दीपावली), हाथे (शीतला मा
पगल्या (जन्म), गंगापूजन भित्तिचित्र (विवाह) की बहुत समृद्ध परंपरा मालव
दिखाई देती है।

नारियल की जटाओं को खड़िया मिट्टी के उजले रंग और गेरू में डु
मिट्टी के घरों और मंदिरों में चित्र उकेरे जाते हैं। साथ ही गोबर, फूल की पंखु
रंगीन कागज के टुकड़ों, संगमरमर का बारीक चूर्ण विविध सूखे रंगों को मि
मांडणा, चित्रावण, संजा, रंगोली आदि लोकचित्रों की सर्जना की जाती है

मालवा के लोक नृत्य- अन्य कलाओं की तरह ही लोक नृत्य भी
पर्व-त्यौहार पर किये जाते हैं। मालवा के लोकनृत्यों में प्रमुख निम्नानुसार

लोकनृत्य का नाम	विशेषताएँ
मटकी नृत्य	1. मटकी का अर्थ मटकते हुए नाचना है। 2. हर्ष का अवसर हो या कोई पर्व-उत्सव हो, घर के आँगन, चबूतरे या किसी खुले स्थ एकत्रित होती हैं, गोल घेरा बनाकर ढोली के की ताल पर मटकते हुए नाचती हैं।
आड़ा नाच	1. यह एकल या समूह में किया जाता है। 2. यह महिलाओं के द्वारा किया जाने वाला जिसमें वे घूँघट डालकर गीत या ढोल की ता नाचती हैं। 3. पारंपरिक वेश जैसे-कलीदार घाघरा, लुगड़ा, और आभूषण जैसे- बोर, टीका, झुमक तुस्सी, हँसली, बाजूबंद, चामचूड़ी, कड़े, कंधोरा, पायजेब, बिछुआ, अनवट आदि इस नृत्य को प्रस्तुत किया जाता है।
रजवाड़ी नृत्य	1. विवाह, मुंडन, संजा, नवरात्र, होली और ग अवसर यह नृत्य किया जाता है। 2. यह धीमी ताल पर साड़ी के पल्लू को पकड़

गुरु पूनों	गुरु पूर्णिमा	गोबर, मिट्टी, हल्दी	भित्तिचित्र नि... स्वस्तिक का अं...
नाग पंचमी	श्रावण शुक्ला पंचमी		मुख्य द्वार के ... और नागाकृति...

लोक नृत्य- बुंदेलखंड की लोक संस्कृति में धार्मिक, सामाजिक ... पौराणिक कथानकों पर आधारित नृत्यों की बहुलता है, चूँकि यह अंचल शौर्यगाथा... की भूमि है अतः शस्त्रपूजा पर आधारित नृत्य भी यहाँ दिखाई देते हैं। कुछ प्र... लोकनृत्य निम्नानुसार हैं-

लोकनृत्य का नाम	विशेषताएँ
कानड़ा नृत्य	1. रजक या धोबी समुदाय द्वारा किया जाता है। 2. विवाह अथवा जन्मोत्सव के अवसर पर इसमें ... वंदना और ईशकथाओं का गायन किया जाता ... 3. सारंगी और ढोलक पर पहले धीमी गति से ... फिर द्रुत गति से नृत्य किया जाता है।
सैरा नृत्य (सैला)	1. वर्षाकालीन नृत्य है। 2. तीज के अवसर पर किया जाता है। 3. पुरुषप्रधान सामूहिक नृत्य है।
ढिमरयाई नृत्य	1. विवाह और दुर्गोत्सव पर ढीमर जाति के लोग ... नृत्य को करते हैं। 2. मृदंग की थाप और दौड़ते हुए, पंजों के ब... चलते हुए द्रुत गति से घुमेर लेते हुए नृत्य किया ... है। यह एक ऊर्जापूर्ण नृत्य है।
अखाड़ा नृत्य	1. दशहरे के अवसर पर किया जाता है। 2. युद्ध कौशल, व्यायाम जैसी दैहिक क्रियाएँ इ... की विशेषताएँ हैं। 3. इस नृत्य में शस्त्र-संचालन भी प्रदर्शित किया ... है।

जवारा नृत्य	1. यह नृत्य चैत्र नवरात्र पर किया जाता है। 2. धार्मिक गीतों का गायन होता है। 3. यह एकल शैली का नृत्य है।
राई नृत्य	1. यह बुंदेलखंड का एक विशिष्ट नृत्य है जिसमें बेड़नी और मृदंग बजाने वाला परस्पर संवाद करते हैं। 2. जिस प्रकार राई का दाना थाली में तेजी से घूमता है, उसी प्रकार बेड़नी एक ओर से दूसरे ओर तीव्र गति से घूमते हुए नाचती है। 3. यह नृत्य फागुन और चैत माह में होली के अवसर पर किया जाता है। 4. यह नृत्य मशाल के प्रकाश में किया जाता है। 5. हारमोनियम, रमतूला, ढोलक, ढपला, सारंगी, झाँझ जैसे वाद्यों के साथ किया जाता है।

लोकशिल्प

गुड़िया शिल्प- बुंदेलखंड से लगे हुए चम्बल क्षेत्र के ग्वालियर अंचल में नयी-पुरानी चिंदियों और कागज की कतरनों से गुड़िया बनाई जाती हैं। इन्हें बट्टो बाई के नाम से जाना जाता है। पैर के लिए बाँस की पतली लकड़ी और कपड़े को सर का आकार देने के लिए लकड़ी का बुरादा प्रयुक्त किया जाता है। आप सबने इनके बारे में अपनी माँ से अवश्य सुना होगा।

मालवी लोककला

मालवा अंचल पुरातन काल से अपनी विशिष्ट और समृद्ध लोक कला के लिए विख्यात है। लोक जीवन अपने अनूठे सौन्दर्य और मिठास के साथ यहाँ की लोककला में मुखरित होता है। चित्र, शिल्पकारी, नृत्य इन सभी रूपों में मालवा का लोक मानस रूपांकित होता है।

लोक चित्र- प्रकृति, जीवन और संस्कृति लोक से संयुक्त होकर इन लोक चित्रों में उकेरी गयी है, जिन्हें निम्न बिन्दुओं में देख सकते हैं-

पर्व, तीज-त्यौहार, उत्सवों के अवसर पर दिवासा (हरियाली अमावस्या), नागचित्र (नाग पंचमी), कृष्ण-जन्म पर भित्तिचित्र (जन्माष्टमी), पितृपक्ष में संजा,

2.
मध्यप्रदेश की लोककलाएँ

भारतीय लोकजीवन में कलाएँ जीवन की सहचरी हैं। मनुष्य का जीवन आजन्म-मरण एक उत्सवधर्मिता के साथ चलता है। संगीत, नृत्य, अभिनय, चित्र सब इसी लोकधर्मी कला में समाहित रहते हैं। हमारा देश विविध अंचलों, भाषाओं और संस्कृतियों का समुच्चय है किन्तु उनमें भावात्मक और वैचारिक एकता दिखाई देती है। यही ऐक्य लोककलाओं के माध्यम से रूपायित होता है। कह सकते हैं कि लोकधर्मी कलाएँ राष्ट्रीय एकात्मकता की सूत्ररूपा हैं।

लोक शब्द का आशय

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में- 'लोक मनुष्य समाज का वह वर्ग है, जो आभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता, पांडित्य की चेतना और पांडित्य के अहंकार से शून्य है, जो एक परंपरा के प्रवाह में जीवित रहता है।' (हिंदी साहित्य कोश भाग- 1, पृष्ठ- 689)

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल की टिप्पणी है- 'लोक राष्ट्र की अमूल्य निधि है। हमारे इतिहास में जो भी सुन्दर तेजस्वी स्वर हैं, वह लोक में कहीं-न-कहीं सुरक्षित हैं। हमारी कृषि, अर्थशास्त्र ज्ञान, साहित्यकला के नाना रूप, भाषाएँ और शब्दों के भंडार, जीवन के आनंदमय पर्वोत्सव, नृत्य-संगीत,कथा वार्ताएँ, आचार-विचार सब कुछ भारतीय लोक से ओतप्रोत हैं।' (लोक का प्रत्यक्ष दर्शन, पृष्ठ- 67)

लोककलाओं को तीन भागों में देखा जा सकता है-

1. **लोकचित्र-** वह रेखांकन जो भित्ति, भूमि, कागज़, कपड़े, लकड़ी, पत्तों पर बनाये जाते हैं।
2. **लोक नृत्य-** ये जातीय संस्कृति की परंपरा को अक्षुण्ण रखने वाली कला है।
3. **लोक शिल्प-** धातु, पत्थर, लकड़ी, घास-बाँस, पत्ते, रेशे और मिट्टी से बनी उपयोगी और सजावट के लिए प्रयुक्त होने वाली कलाकृतियाँ।

इस पाठ में हम मध्यप्रदेश की लोककलाओं के सम्बन्ध में विचार करेंगे। 'अतुल्य भारत' का हृदय प्रदेश होने के साथ ही मध्यप्रदेश बहुरंगी लोककलाओं की परम्पराओं से भी समृद्ध है। मध्यप्रदेश की लोककलाओं में हर अंचल का निजी संस्पर्श मिलता है। अब हम अंचलों के आधार पर मध्यप्रदेश की लोककलाओं से परिचय प्राप्त करेंगे, जो कि लोकचित्र, लोकनृत्य और लोकशिल्प जैसे आयामों में द्रष्टव्य होती हैं-

1. बुन्देली लोककला
2. मालवी लोककला
3. बघेली लोककला
4. निमाड़ी लोककला
5. जनजातीय लोककला

बुन्देली लोककलाएँ

बुंदेलखंड की शौर्यगाथाएँ वहाँ की लोककलाओं में बसती हैं।

बुन्देली लोकचित्र- वहाँ के लोकचित्रों में पर्वोत्सव, तीज-त्यौहारों का रूपांकन दिखाई देता है। इन लोकचित्रों के प्रमुख रूपों को तालिका में निम्नानुसार देखा जा सकता है-

नाम	पर्व/संस्कार	उपकरण	विशेषताएँ
सुरैती	दीपावली/ लक्ष्मीपूजन	गोबर, मिट्टी, आटा	चौक पूरना और भित्तिचित्र
नौरता	नवरात्र	मिट्टी, गेरू, हल्दी	अविवाहित कन्याओं द्वारा भित्तिचित्र निर्माण
मामुलिया	नवरात्र	गोबर, रंग-बिरंगे फूल	भित्तिचित्र
मोरइला		विभिन्न रंग, गेरू और मिट्टी	मोर की आकृतियों से बने भित्तिचित्र
मोरते	विवाह		पुतलियों का अंकन द्वार पर

2.
मध्यप्रदेश की लोककलाएँ

भारतीय लोकजीवन में कलाएँ जीवन की सहचरी हैं। मनुष्य का जी
आजन्म-मरण एक उत्सवधर्मिता के साथ चलता है। संगीत, नृत्य, अभिनय, चि
सब इसी लोकधर्मी कला में समाहित रहते हैं। हमारा देश विविध अंचलों, भाषा
और संस्कृतियों का समुच्चय है किन्तु उनमें भावात्मक और वैचारिक एकता दिख
देती है। यही ऐक्य लोककलाओं के माध्यम से रूपायित होता है। कह सकते
कि लोकधर्मी कलाएँ राष्ट्रीय एकात्मकता की सूत्ररूपा हैं।

लोक शब्द का आशय

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में- 'लोक मनुष्य समाज का वह
है, जो आभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता, पांडित्य की चेतना और पांडित्य के अहं
से शून्य है, जो एक परंपरा के प्रवाह में जीवित रहता है।' (हिंदी साहित्य को
भाग- 1, पृष्ठ- 689)

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल की टिप्पणी है- 'लोक राष्ट्र की अमूल्य निधि
हमारे इतिहास में जो भी सुन्दर तेजस्वी स्वर हैं, वह लोक में कहीं-न-कहीं सुर
हैं। हमारी कृषि, अर्थशास्त्र ज्ञान, साहित्यकला के नाना रूप, भाषाएँ और शब्दों
भंडार, जीवन के आनंदमय पर्वोत्सव, नृत्य-संगीत,कथा वार्ताएँ, आचार-विचार
कुछ भारतीय लोक से ओतप्रोत हैं।' (लोक का प्रत्यक्ष दर्शन, पृष्ठ- 67)

लोककलाओं को तीन भागों में देखा जा सकता है-

1. **लोकचित्र**- वह रेखांकन जो भित्ति, भूमि, कागज़, कपड़े, लकड़ी
पत्तों पर बनाये जाते हैं।
2. **लोक नृत्य**- ये जातीय संस्कृति की परंपरा को अक्षुण्ण रखने
कला है।
3. **लोक शिल्प**- धातु, पत्थर, लकड़ी, घास-बाँस, पत्ते, रेशे और

से बनी उपयोगी और सजावट के लिए प्रयुक्त होने वाली कलाकृतियाँ।

इस पाठ में हम मध्यप्रदेश की लोककलाओं के सम्बन्ध में विचार करेंगे। 'अतुल्य भारत' का हृदय प्रदेश होने के साथ ही मध्यप्रदेश बहुरंगी लोककलाओं की परम्पराओं से भी समृद्ध है। मध्यप्रदेश की लोककलाओं में हर अंचल का निजी संस्पर्श मिलता है। अब हम अंचलों के आधार पर मध्यप्रदेश की लोककलाओं से परिचय प्राप्त करेंगे, जो कि लोकचित्र, लोकनृत्य और लोकशिल्प जैसे आयामों में द्रष्टव्य होती हैं-

1. बुन्देली लोककला
2. मालवी लोककला
3. बघेली लोककला
4. निमाड़ी लोककला
5. जनजातीय लोककला

बुन्देली लोककलाएँ

बुंदेलखंड की शौर्यगाथाएँ वहाँ की लोककलाओं में बसती हैं।

बुन्देली लोकचित्र- वहाँ के लोकचित्रों में पर्वोत्सव, तीज-त्यौहारों का रूपांकन दिखाई देता है। इन लोकचित्रों के प्रमुख रूपों को तालिका में निम्नानुसार देखा जा सकता है-

नाम	पर्व/संस्कार	उपकरण	विशेषताएँ
सुरैती	दीपावली/ लक्ष्मीपूजन	गोबर, मिट्टी, आटा	चौक पूरना और भित्तिचित्र
नौरता	नवरात्र	मिट्टी, गेरू, हल्दी	अविवाहित कन्याओं द्वारा भित्तिचित्र निर्माण
मामुलिया	नवरात्र	गोबर, रंग-बिरंगे फूल	भित्तिचित्र
मोरइला		विभिन्न रंग, गेरू और मिट्टी	मोर की आकृतियों से बने भित्तिचित्र
मोरते	विवाह		पुतलियों का अंकन द्वार पर

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. किसने कहा था कि 'सब पुराने अच्छे नहीं होते, सब नए खराब ही नहीं होते'-
   (क) मैक्स मूलर (ख) हजारी प्रसाद द्विवेदी
   (ग) स्वामी विवेकानन्द (घ) कालिदास
2. 'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' पाठ में बूढ़े ने सबसे बड़ी चीज किसे माना है-
   (क) प्रेम (ख) क्रोध
   (ग) भय (घ) घृणा
3. लेखक के अनुसार मनुष्य के नाखून किसके जीवंत प्रतीक हैं-
   (क) मनुष्यता के (ख) सभ्यता
   (ग) पाशवी वृत्ति के (घ) सौन्दर्य के
4. 'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' गद्य साहित्य की कौन-सी विधा है-
   (क) कहानी (ख) कविता
   (ग) भाषण (घ) ललित निबंध
5. 'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' शीर्षक निबन्ध किसके कथन का उत्तर है-
   (क) छोटी लड़की का (ख) बूढ़ा का
   (ग) बड़े नेता का (घ) इनमें से कोई नहीं

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. आर्यों के पास कौन-सी दो चीज़ें थीं?
2. अभ्यासजन्य सहजात वृत्तियाँ कौन-कौन-सी हैं?
3. हमारी संस्कृति की बड़ी भारी विशेषता क्या है?
4. मनुष्य का स्वधर्म क्या है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. मनुष्य किस ओर जा रहा है? प्रारंभ से उसकी विकास यात्रा पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. सफलता और चरितार्थता में क्या अंतर है? स्पष्ट कीजिए।
3. लेखक के अनुसार अँग्रेजी के 'इंडिपेंडेंस' और हिंदी के 'स्वाधीनता' शब्द में क्या अंतर है?
4. 'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' निबंध के सार तत्त्व का वर्णन कीजिए।
5. ललित निबंध के स्वरूप का वर्णन कीजिए।

❖ ❖ ★ ❖ ❖

से भिन्न है। उसमें संयम है, दूसरे के सुख-दुःख के प्रति संवेदना है, श्रद्धा है, त्याग है। यह मनुष्य के स्वयं के उद्भावित बंधन हैं इसीलिये मनुष्य झगड़े को अपना आदर्श नहीं मानता, गुस्से में आकर चढ़-दौड़ने वाले अविवेकी को समझता है और वचन, मन और शरीर से किये गए असत्याचरण को गलत मानता है। यह किसी भी जाति या वर्ण या समुदाय का धर्म नहीं है। यह मनुष्य मात्र का धर्म है। महाभारत में इसीलिए निर्वैर भाव, सत्य और अक्रोध को वर्णों का सामान्य धर्म कहा है-

एतद्धि त्रितयं श्रेष्ठम सर्वभूतेषु भारत।
निर्वैरता महाराज सत्यमक्रोध एव च॥ (अनुशासन पर्व 120-10)

अन्यत्र इसमें निरंतर दानशीलता को भी गिनाया गया है। गौतम ने ठीक कहा था कि मनुष्य की मनुष्यता यही है कि वह सबके दुःख-सुख को सहानुभूति के साथ देखता है। यह आत्मनिर्मित बंधन ही मनुष्य को मनुष्य बनाता है। अहिंसा, सत्य और अक्रोधमूलक धर्म का मूल उत्स यही है। मुझे आश्चर्य होता है कि अनजाने में भी हमारी भाषा में यह भाव कैसे रह गया है, लेकिन मुझे नाखून बढ़ने पर आश्चर्य हुआ था। अज्ञान सर्वत्र आदमी को पछाड़ता है और आदमी है कि सदा उससे लोहा लेने को कमर कसे है। मनुष्य को सुख कैसे मिलेगा? बड़े-बड़े नेता कहते हैं वस्तुओं की कमी है और मशीन बैठाओ, और उत्पादन बढ़ाओ। एक बूढ़ा था उसने कहा था-बाहर नहीं भीतर की ओर देखो। हिंसा को मन से दूर करो, मिथ्या को हटाओ, क्रोध और द्वेष को दूर करो, लोक के कष्ट सहो, आराम की बात मत सोचो, प्रेम की बात सोचो, आत्म-तोषण की बात सोचो, काम करने की बात सोचो। उसने कहा प्रेम ही बड़ी चीज है, क्योंकि वह हमारे भीतर है। उच्छृंखलता पशु की प्रवृत्ति है, 'स्व' का बंधन मनुष्य का स्वभाव है। बूढ़े की बात अच्छी लगी या नहीं, पता नहीं। उसे गोली मार दी गयी, आदमी के नाखून बढ़ने की प्रवृत्ति ही हावी हुई। मैं हैरान होकर सोचता हूँ- बूढ़े ने कितनी गहराई में पैठकर मनुष्य की वास्तविक चरितार्थता का पता लगाया था।

ऐसा कोई दिन आ सकता है, जबकि मनुष्य के नाखूनों का बढ़ना बंद हो जाएगा। प्राणि-शास्त्रियों का ऐसा अनुमान है कि मनुष्य का अनावश्यक अंग उसी प्रकार झड़ जाएगा, जिस प्रकार उसकी पूँछ झड़ गई है। उस दिन मनुष्य की पशुता भी लुप्त हो जाएगी। शायद उस दिन वह मारणास्त्रों का प्रयोग भी बंद कर देगा।

कि नाखून का बढ़ना मनुष्य के भीतर की पशुता की निशानी है और उसे नहीं बढ़ने देना मनुष्य की अपनी इच्छा है, अपना आदर्श है। वृहत्तर जीवन में अस्त्र-शस्त्रों को बढ़ने देना मनुष्य की पशुता की निशानी है और उनकी बाढ़ को रोकना मनुष्यत्व का तकाजा है। मनुष्य में जो घृणा है, जो अनायास विना सिखाये आ जाती है, वह पशुत्व का द्योतक है और अपने को संयत रखना, दूसरे के मनोभावों का आदर करना मनुष्य का स्वधर्म है। बच्चे यह जानें तो अच्छा हो कि अभ्यास और तप से प्राप्त वस्तुएँ मनुष्य की महिमा को सूचित करती हैं।

सफलता और चरितार्थता में अंतर है। मनुष्य मारणास्त्रों के संचयन से, वाह्य उपकरणों के बाहुल्य से उस वस्तु को पा सकता है, जिसे उसने बड़े आडम्बर के साथ सफलता का नाम दे रखा है, परन्तु मनुष्य की चरितार्थता प्रेम में है, मैत्री में है, त्याग में है, अपने को सबके मंगल के लिए निःशेष भाव से दे देने में है। नाखूनों का बढ़ना मनुष्य की उस अंध सहजात वृत्ति का परिणाम है, जो उसके जीवन में सफलता ले आना चाहती है, उसको काट देना उस स्वनिर्धारित आत्म-बंधन का फल है, जो उसे चरितार्थता की ओर ले जाती है।

कमबख्त नाखून बढ़ते हैं तो बढ़ें, मनुष्य उन्हें बढ़ने नहीं देगा।

कठिन शब्दों के अर्थ

अल्पज्ञ- कम जानने वाला, व्यवहृत- व्यवहार में लाया गया, अनुवर्तिता- अनुसरण या अनुकरण करना, अनुसंधित्सा- अनुसन्धान या खोज करने की इच्छा, उद्भावित- उत्पन्न किये हुए, निर्वैर- वैर-रहित, वांछनीय- चाहने योग्य, उत्स-स्रोत, चरितार्थता-अर्थवान, सार्थकता, निःशेष- सम्पूर्ण, कुछ भी न बचाकर।

सन्दर्भ संकेत

1. https://chilmans37.wordpress.com/2019/09/27
2. https://www.hindisamay.com/content/9737
3. शान्ति निकेतन से शिवालिक, सं. शिवप्रसाद सिंह
4. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास-डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी
5. जोग लिखि, अज्ञेय, राजपाल एंड संस, नई दिल्ली

प्राणि-विज्ञानियों का निश्चित मत है कि मानव-चित्त की भाँति मानव-शरीर में भी
बहुत-सी अभ्यासजन्य सहज वृत्तियाँ रह गयी हैं। दीर्घकाल तक उनकी आवश्यकता
रही है। अतएव शरीर ने अपने भीतर एक ऐसा गुण पैदा कर लिया है कि वे वृत्तियाँ
अनायास ही और शरीर के अनजान में भी अपने-आप काम करती हैं। नाखून का
बढ़ना उनमें से एक है, केश का बढ़ना दूसरा है, दाँत का दुबारा उगना तीसरा है,
पलकों का गिरना चौथा है और असल में सहजात वृत्तियाँ अनजान की स्मृतियों
को ही कहते हैं। हमारी भाषा में भी इसके उदाहरण मिलते हैं। अगर आदमी अपने
शरीर की, मन की और वाक् की अनायास घटने वाली वृत्तियों के विषय में विचार
करे तो उसे अपनी वास्तविक प्रवृत्ति पहचानने में बहुत सहायता मिले। पर कौन
सोचता है? सोचता तो क्या उसे इतना भी पता नहीं चलता कि उसके भीतर नख
बढ़ा लेने की जो सहजात वृत्ति है, वह उसके पशुत्व का प्रमाण है। उन्हें काटने
की जो प्रवृत्ति है, वह उसकी मनुष्यता की निशानी है और यद्यपि पशुत्व के चिह्न
उसके भीतर रह गए हैं पर वह पशुत्व को छोड़ चुका है। पशु बनकर वह आगे
नहीं बढ़ सकता। उसे कोई और रास्ता खोजना चाहिए। अस्त्र बढ़ाने की प्रवृत्ति
मनुष्यता की विरोधिनी है।

मेरा मन पूछता है किस ओर? मनुष्य किस ओर बढ़ रहा है? पशुता की
ओर या मनुष्यता की ओर, अस्त्र बढ़ाने की ओर या अस्त्र काटने की ओर? मेरी
निर्बोध बालिका ने मानो मनुष्य जाति से ही प्रश्न किया है- जानते हो, नाखून क्यों
बढ़ते हैं? यह हमारी पशुता के अवशेष हैं। मैं भी पूछता हूँ- जानते हो ये अस्त्र-
शस्त्र क्यों बढ़ रहे हैं? ये हमारी पशुता की निशानी हैं। भारतीय भाषाओं में प्रायः
ही अँग्रेजी के 'इंडिपेंडेंस' शब्द का समानार्थक शब्द व्यवहृत नहीं होता। अगस्त को
जब अँग्रेजी भाषा के पत्र 'इंडिपेंडेंस' की घोषणा कर रहे थे, देशी भाषा के पत्र
'स्वाधीनता दिवस' की चर्चा कर रहे थे। 'इंडिपेंडेंस' का अर्थ है अनधीनता या
किसी की अधीनता का अभाव, पर स्वाधीनता शब्द का अर्थ है अपने ही अधीन
रहना। अँग्रेजी में कहना हो तो 'सेल्फ डिपेंडेंस' कह सकते हैं। मैं कभी-कभी सोचता
हूँ कि इतने दिनों तक अँग्रेजी की अनुवर्तिता करने के बाद भारतवर्ष 'इंडिपेंडेंस'
को अनधीनता क्यों नहीं कह सका? उसने अपनी आजादी के जितने भी नामकरण
किये- स्वतंत्रता, स्वराज्य, स्वाधीनता उन सबमें 'स्व' का बंधन अवश्य रखा। यह
क्या संयोग की बात है या हमारी समूची परंपरा ही अनजान में, हमारी भाषा
प्रकट होती रही है? मुझे प्राणि-विज्ञानी की बात फिर याद आती है- सहजात वृत्ति

अनजानी स्मृतियों का ही नाम है। स्वराज होने के बाद स्वभावतः ही हमारे नेता
और विचारशील नागरिक सोचने लगे हैं कि इस देश को सच्चे अर्थ में सुखी कैसे
बनाया जाए। हमारे देश के लोग पहली बार यह सब सोचने लगे हों ऐसी बात
नहीं है। हमारा इतिहास बहुत पुराना है, हमारे शास्त्रों में इस समस्या को नाना भावों
और नाना पहलुओं से विचारा गया है। हम कोई नौसिखिये नहीं हैं, जो रातों-रात
जंगल में पहुँचाकर अरक्षित छोड़ दिए गए हों। हमारी परंपरा महिमामयी, उत्तराधिकार
विपुल और संस्कार उज्ज्वल हैं। हमारे अनजान में भी ये बातें हमें एक खास दिशा
में सोचने की प्रेरणा देती हैं। यह जरूर है कि परिस्थितियाँ बदल गयी हैं। उपकरण
नए हो गए हैं और उलझनों की मात्रा भी बहुत बढ़ गयी है पर मूल समस्याएँ
बहुत अधिक नहीं बदली हैं। भारतीय चित्त जो आज भी अनधीनता के रूप में
न सोचकर 'स्वाधीनता' के रूप में सोचता है, वह हमारे दीर्घकालीन संस्कारों का
फल है। वह 'स्व' के बंधन को आसानी से नहीं छोड़ सकता है। अपने-आप पर
अपने-आप के द्वारा लगाया हुआ बंधन हमारी संस्कृति की बड़ी भारी विशेषता है।
मैं ऐसा तो नहीं मानता कि जो कुछ हमारा पुराना है, जो कुछ हमारा विशेष है,
उससे हम चिपटे रहें। पुराने का 'मोह' सब समय वांछनीय ही नहीं होता। मरे बच्चे
को गोद में दबाये रहने वाली 'बंदरिया' मनुष्य का आदर्श नहीं बन सकती, परन्तु
मैं ऐसा भी नहीं सोच सकता कि हम नयी अनुसंधित्सा के नशे में चूर होकर अपना
सरबस खो दें। कालिदास ने कहा था कि सब पुराने अच्छे नहीं होते, सब नये
खराब ही नहीं होते। भले लोग दोनों की जाँच कर लेते हैं, जो हितकर होता है
उसे ग्रहण करते हैं और मूढ़ लोग दूसरों के इशारे पर भटकते रहते हैं सो, हमें
परीक्षा करके हितकर बात सोच लेनी होगी और अगर हमारे पूर्वसंचित भण्डार में
वह हितकर वस्तु निकल आए, तो इससे बढ़कर और क्या हो सकता है?

जातियाँ इस देश में अनेक आई हैं। लड़ती-झगड़ती भी रही हैं, फिर प्रेमपूर्वक
बस भी गयी हैं। सभ्यता की नाना सीढ़ियों पर खड़ी और नाना ओर मुख करके
चलने वाली इन जातियों के लिए एक सामान्य धर्म खोज निकालना कोई सहज
बात नहीं थी। भारतवर्ष के ऋषियों ने अनेक प्रकार से इस समस्या को सुलझाने
की कोशिश की थी। पर एक बात उन्होंने लक्ष्य की थी कि समस्त वर्णों और
समस्त जातियों का एक सामान्य आदर्श भी है। वह है अपने ही बंधनों से अपने
को बाँधना। मनुष्य पशु से किस बात में भिन्न है! आहार-निद्रा आदि पशु-सुलभ
स्वभाव उसके ठीक वैसे ही हैं, जैसे अन्य प्राणियों के, लेकिन वह फिर भी पशु

प्राकृतिक विकास में जिस दिन मनुष्य के नाखूनों का बढ़ना बंद हो जाएगा, उ
दिन मनुष्य की पशुता भी समाप्त हो जाएगी। उस दिन के आने तक मनुष्य को
काटता रहेगा, पशुत्व को कुचलता रहेगा। मिथ कथाओं, इतिहास, राजनीति
दर्शन के विभिन्न आयामों को व्यक्त करते हुए आचार्य द्विवेदी इस सार तत्व
ओर इंगित करते हैं कि नाखूनों का बढ़ना सहजात वृत्ति और प्रकृति है, उन्हें
देना विकृति है और उन्हें काटते रहना संस्कृति है।

नाखून क्यों बढ़ते हैं?

नाखून क्यों बढ़ते हैं? बच्चे कभी-कभी चक्कर में डाल देने वाले प्रश्न क
बैठते हैं। अल्पज्ञ पिता बड़ा दयनीय जीव होता है। मेरी छोटी लड़की ने जब
दिन पूछ लिया कि आदमी के नाखून क्यों बढ़ते हैं तो मैं कुछ सोच ही नहीं सका
हर तीसरे दिन नाखून बढ़ जाते हैं, बच्चे कुछ दिन उन्हें बढ़ने दें, तो माँ-बाप अक
उन्हें डाँटा करते हैं, पर कोई नहीं जानता कि ये अभागे नाखून क्यों इस प्रकार
करते हैं। काट दीजिये, वे चुपचाप दण्ड स्वीकार कर लेंगे; पर निर्लज्ज अपराधी
की भाँति फिर छूटते ही सेंध पर हाजिर आखिर ये इतने बेहया क्यों हैं?

कुछ लाख ही वर्षों की बात है, जब मनुष्य जंगली था; वनमानुष जैसा
नाखून की जरूरत थी। उसकी जीवन रक्षा के लिए नाखून बहुत जरूरी थे। आज
में वही उसके अस्त्र थे। दाँत भी थे, पर नाखून के बाद ही उनका स्थान था।
दिनों उसे जूझना पड़ता था, प्रतिद्वंद्वियों को पछाड़ना पड़ता था, नाखून उसके लि
आवश्यक अंग था। फिर धीरे-धीरे वह अपने अंग से बाहर की वस्तुओं का सहा
लेने लगा। पत्थर के ढेले और पेड़ काम में लाने लगा (रामचंद्र जी की वानर
सेना के पास ऐसे ही अस्त्र थे)। उसने हड्डियों के भी हथियार बनाये। इन हड्
के हथियारों में सबसे मजबूत और सबसे ऐतिहासिक था देवताओं के राजा क
वज्र, जो दधीचि मुनि की हड्डियों से बना था। मनुष्य और आगे बढ़ा, उसने धा
के हथियार बनाये। जिनके पास लोहे के शस्त्र और अस्त्र थे, वे विजयी हुए
देवताओं के राजा तक को मनुष्यों के राजा से इसलिए सहायता लेनी पड़ती थी
कि मनुष्यों के राजा के पास लोहे के अस्त्र थे असुरों के पास अनेक विद्याएँ थीं
पर लोहे के अस्त्र नहीं थे, शायद घोड़े भी नहीं थे। आर्यों के पास ये दोनों चीजें
थीं। आर्य विजयी हुए फिर इतिहास अपनी गति से बढ़ता गया। नाग हारे, सुपर्ण
हारे, यक्ष हारे, गन्धर्व हारे, असुर हारे, राक्षस हारे। लोहे के अस्त्रों ने बाजी मा
ली। इतिहास आगे बढ़ा। पलीते वाली बन्दूकों ने, कारतूसों ने, तोपों ने, बमों ने

बमवर्षक वायुयानों ने इतिहास को किस कीचड़ भरे घाट तक घसीटा है, यह सबको मालूम है। नख-धर मनुष्य अब एटम बम पर भरोसा करके आगे की ओर चल पड़ा है पर उसके नाखून अब भी बढ़ रहे हैं। अब भी प्रकृति मनुष्य को उसके भीतर वाले अस्त्र से वंचित नहीं कर रही है, अब भी वह याद दिला देती है कि तुम्हारे नाखून को भुलाया नहीं जा सकता। तुम वही लाख वर्ष पहले के नख-दंतावलम्बी जीव हो- पशु के साथ एक ही सतह पर विचरने वाले और चरने वाले।

ततः किम्। मैं हैरान होकर सोचता हूँ कि मनुष्य आज अपने बच्चों को नाखून न काटने के लिए डाँटता है। किसी दिन, कुछ थोड़े लाख वर्ष पूर्व वह अपने बच्चों को नाखून नष्ट करने पर डाँटता रहा होगा, लेकिन प्रकृति है कि वह अब भी नाखून को जिलाये जा रही है और मनुष्य है कि वह अब भी उसे काटे जा रहा है। वे कमबख्त रोज बढ़ते हैं क्योंकि वे अंधे हैं, नहीं जानते कि मनुष्य को इससे कोटि-कोटि गुना शक्तिशाली अस्त्र मिल चुका है। मुझे ऐसा लगता है कि मनुष्य अब नाखून को नहीं चाहता। उसके भीतर बर्बर-युग का कोई अवशेष रह जाय, यह उसे असह्य है, लेकिन यह भी कैसे कहूँ, नाखून काटने से क्या होता है? मनुष्य की बर्बरता घटी कहाँ है? वह तो बढ़ती जा रही है! मनुष्य के इतिहास में हिरोशिमा का हत्याकाण्ड बार-बार थोड़े ही हुआ है। यह तो उसका नवीनतम रूप है। मैं मनुष्य के नाखून की ओर देखता हूँ, तो कभी-कभी निराश हो जाता हूँ। ये उसकी भयंकर पाशवी वृत्ति के जीवंत प्रतीक हैं। मनुष्य की पशुता को जितनी बार भी काट दो, वह मरना नहीं जानती।

कुछ हजार साल पहले मनुष्य ने नाखून को सुकुमार विनोदों के लिए उपयोग में लाना शुरू किया था। वात्स्यायन के कामसूत्र से पता चलता है कि आज से दो हजार वर्ष पहले का भारतवासी नाखूनों को जमके सँवारता था। उनके काटने की कला काफी मनोरंजक बतायी गयी है। त्रिकोण, वर्तुलाकार, चंद्राकार, दन्तुल आदि विविध आकृतियों के नाखून उन दिनों विलासी नागरिकों के न जाने किस काम आया करते थे। उनको सिक्थक (मोम) और अलक्तक (आलता) से यत्नपूर्वक रगड़कर लाल और चिकना बनाया जाता था। गौड़ देश के लोग उन दिनों बड़े-बड़े नखों को पसंद करते थे और दाक्षिणात्य लोग छोटे नखों को। अपनी-अपनी रुचि है, देश की भी और काल की भी लेकिन समस्त अधोगामिनी वृत्तियों को और नीचे खींचने वाली वस्तुओं को भारतवर्ष ने मनुष्योचित बनाया है, यह बात चाहूँ तो भी नहीं भूल सकता। मानव-शरीर का अध्ययन करने वाले

के क्षेत्र में 1957 में 'पद्म भूषण' से सम्मानित किया था।

ललित निबन्ध : स्वरूप

कहा जाता है कि गद्य कवियों की कसौटी है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल नि... को गद्य की कसौटी मानते हैं। निबंध के विषय में पश्चिम के प्रसिद्ध निबं... सैम्युअल जानसन लिखते हैं-

"A loose sally of the mind; an irregular indigested piece, n... a regular and orderly composition." (A Dictionary of the Eng... Language)

अर्थात् मानस की स्वच्छंद उड़ान जो नियमित और क्रमबद्ध न होकर विश्... लिए हुए हो। रामस्वरूप चतुर्वेदी ललित निबंधों की चर्चा करते हुए लिखते हैं ... 'कभी-कभी लगता है कि पांडित्य में लालित्य का छौंक देने से ललित निबंध तैयार होता है।' (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृष्ठ संख्या-301) अज्ञेय ... वार्तालाप के मध्य ललित निबंध के विषय में कहते हैं, 'रुचि-वैचित्र्य या ... विशेष मनोदशा जब अपने को प्रकट करने के लिए एक लीला भाव अपनाए, ... निबंध में प्रस्तुत की गयी वस्तु का चयन और नियोजन राग-रंजित दृष्टि से कि... जाए, तभी रचना के लालित्य को महत्त्व का स्थान दिया जाएगा और तभी निबं... ललित निबंध कहलायेगा।' (जोग लिखि, पृष्ठ संख्या-105) ललित निबंधों ... सर्जनात्मकता पर बल है। सर्जनात्मक गद्य लालित्य लिये हुए होता है। उस... व्यक्तित्व की छाप होती है, जिसे अलग करके उस पर विचार नहीं किया जा सकता... जिस निबन्ध में परिष्कृत भाषा के माध्यम से भावात्मक एवं बुद्धिपरक विश्लेषण... की अभिव्यंजना हो, उसे ललित निबंध कहते हैं। ललित शब्द का अर्थ है- मनोहर... सुन्दर, मनोरम। इस प्रकार ललित निबंध का तात्पर्य ऐसी रचना से है, जिसमें लेख... का निजी भाव-संस्पर्श हो, सौन्दर्य हो, जो पाठक के मन को रमा ले, उसके चि... को हर ले और अपने प्रांजल प्रवाह में बहा ले जाए।

भारतेंदु हरिश्चंद्र, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, माधव मिश्र, गुलेरी ... अध्यापक पूर्ण सिंह और परवर्ती पीढ़ी के हजारी प्रसाद द्विवेदी, सियारामशरण गु... रामवृक्ष बेनीपुरी, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, शिवप्रसाद सिंह, रमेशचंद्र शा... रंजना अरगड़े से लेकर श्री रामनारायण उपाध्याय और श्री श्रीराम परिहार तक ललि... निबंधों की धारा अनवरत प्रवहमान है। 'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' नामक ललित नि... में द्विवेदी जी ने मानवीय संस्कृति के उद्गम से लेकर उसकी तत्कालीन स्थिति

का तर्कसंगत इतिहास प्रस्तुत करते हुए, अपने इस ललित निबंध को बातचीत के स्तर से ऊपर उठाकर एक व्यापक धरातल पर अवस्थित किया है। 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का प्रसिद्ध निबन्ध है।

प्रमुख बिंदु

1. नाखून मनुष्य आदिम हिंसक मनोवृत्ति का परिचायक है। नाखून बार-बार बढ़ते हैं और मनुष्य उन्हें बार-बार काट देता है तथा हिंसा से मुक्त होने और सभ्य बनने का प्रयत्न करता है। वर्चस्व और विस्तारवादी प्रवृत्ति के चलते अनेक हथियार बने और युद्ध हुए जिनमें लाखों लोग मारे गए।

2. मनुष्य के सामाजिक परिवेश में अनेक विकृतियाँ और विसंगतियाँ बिखरी होती हैं, सभ्य समाज इनको परिष्कृत, परिमार्जित, नियमित और नियन्त्रित करने का प्रयत्न करता है।

3. द्विवेदी जी ने इस आलोचनात्मक निबन्ध में स्पष्ट किया है कि नाखूनों का बढ़ना मनुष्य की उस अन्ध सहजातवृत्ति और भीतर कहीं शेष रह गई पाशविकता का परिणाम है, जो उसके जीवन में सफलता ले आना चाहती है तथा नाखूनों को काट देना स्व-निर्धारित आत्म बन्धन है, जो उसे सार्थकता की ओर ले जाता है। निःसंदेह सार्थकता सफलता से उच्च धरातल पर अवस्थित होती है।

सार

अपनी छोटी लड़की के यह पूछने पर कि नाखून क्यों बढ़ते हैं? आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के भीतर का ललित निबन्धकार जाग उठता है और वे इसका उत्तर खोजने के लिए मनुष्य के आदिमकाल से अब तक के जीवन का विहंगावलोकन करते हैं और इस ललित निबन्ध में इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि नाखून पशुता के प्रतीक हैं और उनका काटना मनुष्यता की निशानी है। ये अस्त्र-शस्त्रों, अणु-परमाणु बमों का बनना भी पशुता की प्रवृत्ति है।

नाखून काटे जाने पर भी बार-बार बढ़कर इस बात को सूचित करते हैं कि अज्ञान सर्वत्र आदमी को पछाड़ता है और आदमी सदैव उससे लोहा लेने को कमर कसता है मनुष्य को सुख, भौतिक सुख-समृद्धि से नहीं मिलेगा, अस्त्र-शस्त्र की बाढ़ से नहीं मिलेगा वरन् सच्चा सुख मिलता है प्रेम से, आत्मदान से, स्वयं को लोक-कल्याण के लिए दे देने से। दधीचि के उदाहरण द्वारा आचार्य द्विवेदी इस भाव को समझाते हैं। प्राणिविज्ञान बताता है कि अनावश्यक अंगों के झड़ने के

साधना करते हुए अपनी कृतियों में उन्होंने पुराचीन भारत के सांस्कृतिक परि... का पुनर्सृजन किया है।

कृतित्व

निबंध- द्विवेदी जी के निबंधों के विषय भारतीय संस्कृति, इतिहास, ज्योति... साहित्य, विविध धर्मों और संप्रदायों के विवेचन पर आधृत हैं। वर्गीकरण की ... से द्विवेदी जी के निबंध दो भागों में विभाजित किए जा सकते हैं-

ललित निबंध- शिरीष के फूल, कुटज, देवदारु, नाखून क्यों बढ़ते हैं, अशोक के फूल, आपने मेरी रचना पढ़ी? आदि।

आलोचनात्मक निबंध- नाथ संप्रदाय, कबीर हिंदी साहित्य की भूमिका, हिंदी साहित्य का आदिकाल, भाषा, साहित्य और देश।

निबंधों के अतिरिक्त आचार्य द्विवेदी ने प्रचुर साहित्य रचा है, इस पर ... दृष्टिपात समीचीन होगा।

विविध सर्जन- महापुरुषों का स्मरण, मृत्युंजय रवींद्र, आदि।

उपन्यास- पुनर्नवा, चारुचंद्र लेख, अनामदास का पोथा, बाणभट्ट की आत्मकथा।

साहित्येतिहास ग्रन्थ- हिंदी साहित्य की भूमिका, हिंदी साहित्य का आदिकाल, भाषा, साहित्य और देश।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उदात्त और महनीय व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अनेक पुस्तकें लिखी गयीं जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं-

1. शांतिनिकेतन से शिवालिक (शिवप्रसाद सिंह,1967)
2. दूसरी परम्परा की खोज (नामवर सिंह, 1982)
3. हजारी प्रसाद द्विवेदी (विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, 1989)
4. साहित्यकार और चिन्तक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी (राममूर्ति त्रिपाठी, 1997)
5. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी- व्यक्तित्व और कृतित्व (व्यास मणि त्रिपाठी, 2008)
6. व्योमकेश दरवेश (विश्वनाथ त्रिपाठी, 2011)

इनमें से 'शान्ति निकेतन से शिवालिक' तथा 'व्योमकेश दरवेश' नामक

रचनाएँ आचार्य द्विवेदी के व्यक्तित्व और कृतित्व को पूरी मेधा के साथ भास्वर करती हैं। 'शान्ति निकेतन से शिवालिक' में भारतीय सिनेमा के महान अभिनेता बलराज साहनी ने उल्लेखनीय टिप्पणी की है, 'ढीलम ढालम रहते हैं, हजामत हफ्ते में एक बार से अधिक नहीं बनाते, कई महानुभाव शान्ति निकेतन से यह धारणा लेकर लौटते हैं कि द्विवेदी वैरागी आदमी हैं...अट्टहास मील के घेरे में कान चीरता है गाड़ी(ट्रेन) देखने के अधिक शौकीन हैं जीवन से अधिक प्रेम करते हैं ज्ञान और अनुभव के लिए अतोपणीय भूख है सुई से लेकर सोशलिज्म तक सभी वस्तुओं का अनुसन्धान करने के लिए उत्सुक रहते हैं।' (पृष्ठ संख्या- 26)

कथ्य-पक्ष- आचार्य द्विवेदी की कृतियों में भारतीय अस्मिता का बहुवर्णी फलक है, जिसमें भारत की उदात्त, उदार और गौरवशाली संस्कृति, स्वर्णिम इतिहास, समृद्ध भूगोल, बहुस्तरीय मिथ कथाएँ, समसामयिक राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र और दर्शन सब कुछ समाविष्ट है।

भाषा-शिल्प- द्विवेदी जी की भाषा परिमार्जित खड़ी बोली है। उन्होंने भाव और विषय के अनुसार भाषा का प्रयोग किया है। उनकी भाषा के दो रूप दिखलाई पड़ते हैं-

1. **प्रांजल व्यावहारिक भाषा-** 'जिजीविषा है तो जीवन रहेगा, जीवन रहेगा तो अनंत संभावनाएँ भी रहेंगी वे जो बच्चे हैं, किसी की टाँग सूख गई है, किसी का पेट फूल गया है, किंसी की आँख सूज गई है, ये जी जाएँ तो इनमें बड़े-बड़े ज्ञानी और उद्यमी बनने की संभावनाएँ हैं।' (अनामदास का पोथा)।

2. **संस्कृतनिष्ठ शास्त्रीय भाषा-** 'शायद इसलिए कि देवदारु भी अर्थातीत छंद है- प्राणों का उल्लास नर्तन, जड़-शक्ति के द्वारा आकर्षण को पराभूत करके विपुल-व्योम-मंडल में विहार करने का अर्थातीत आनंद' (देवदारु निबंध-https://www.hindisamay.com/content)

उपलब्धियाँ तथा पुरस्कार- प्रमुख रूप से आलोचक, इतिहासकार और निबंधकार के रूप में प्रख्यात द्विवेजी जी के कवि हृदय की झलक उनके उपन्यास, निबंध और आलोचना के साथ-साथ इतिहास में भी देखी जा सकती है। 'आलोक पर्व' निबंध के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला। लखनऊ विश्वविद्यालय ने इन्हें डी. लिट्. की उपाधि से अलंकृत किया। आचार्य द्विवेदी को भारत सरकार ने उनकी विद्वत्ता और साहित्यिक सेवाओं को ध्यान में रखते हुए साहित्य एवं शिक्षा

1.
हजारीप्रसाद द्विवेदी

जीवन परिचय

हजारी प्रसाद द्विवेदी जी (19 अगस्त, 1907-19 मई, 1979) भारतीय चिंतन की गरिमामयी परंपरा के मूर्धन्य साहित्यकार हैं। सनातन आर्ष संस्कृति की सामासिक और समन्वयवादी दृष्टि से संपन्न पुरोधा द्विवेदी जी की प्रत्येक रचना पर उनके इस व्यक्तित्व की छाप दिखाई देती है चाहे वह 'अशोक के फूल', 'शिरीष के फूल' या 'कुटज' जैसे निबंध हों या फिर 'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'अनामदास का पोथा' या 'पुनर्नवा' नाम्नी उपन्यास हों, कबीर, सूर जैसे रचनाकारों को पुनर्व्याख्यायित और पुनर्स्थापित करने वाले आलोचक इतिहासकार के रूप में आचार्य द्विवेदी का अवदान महनीय है। अपने पिता पण्डित अनमोल द्विवेदी, जो कि संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे, की सांस्कृतिक परंपरा को और अधिक समृद्ध करने वाले आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का व्यक्तित्व गरिमापूर्ण, उदात्त और उदार है। उनकी उल्लेखनीय विशेषता यह है कि अगाध पांडित्य से परिपूर्ण होने के बाद भी वे सहजमना और संवेदनशील हैं। उनके साहित्य में प्रकृति के प्रति गहन संसक्ति दिखाई देती है जो पुराण, मिथ कथाएँ, भूगोल, मनोविज्ञान, राजनीति, दर्शन और इतिहास के साथ संयुत होकर भारतीय संस्कृति की उदात्तता और गौरव को पुनर्प्रतिष्ठित करती है। उनकी रचनाओं में 'दलित द्राक्षा' का उल्लेख एकाधिक बार आता है, अर्थात् स्वयं को पूरी तरह निचोड़कर दे देना। दलित द्राक्षा की तरह ही अपना सब कुछ उलीचकर दे देना आचार्य द्विवेदी के उदार व्यक्तित्व का विशिष्ट गुण है। इस तरह देखें तो उनके निजी व्यक्तित्व का संस्पर्श ही उनकी विलक्षण कृतियों में समाविष्ट हो गया है। द्विवेदी जी ने प्राध्यापक के रूप में शान्ति निकेतन में लगभग बीस वर्षों तक अध्यापन कार्य किया। शान्ति निकेतन में कविगुरु रवीन्द्रनाथ टैगोर के आत्मीय सम्पर्क में आए। गाँधी-दर्शन से वह प्रभावित रहे और अपनी रचनाओं में जब-तब गांधी जी का उल्लेख करते रहे। लगभग साठ वर्षों तक अविराम साहित्य-

(क) मतवाला (ख) चाँद
(ग) इंदु (घ) सरस्वती

9. महादेवी वर्मा किस धर्म अथवा दर्शन से प्रभावित थीं-
(क) शैव (ख) वेदांत
(ग) बौद्ध (घ) इनमें से कोई नहीं

10. महादेवी वर्मा को किस ग्रंथ पर ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला-
(क) स्मृति की रेखाएँ (ख) यामा
(ग) अतीत के चलचित्र (घ) नीहार

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. गिल्लू किस साहित्यिक विधा में लिखा गया है?
2. लेखिका ने सोनजुही का उल्लेख पाठ में क्यों किया है?
3. गिल्लू की कौन-सी बात पाठकों को प्रभावित करती है?
4. गिल्लू लेखिका के किस ग्रंथ में संकलित है?
5. गिल्लू शब्द के आशय को स्पष्ट कीजिए?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. गिल्लू पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
2. मनुष्य और मनुष्येत्तर जीवों के संबंध को गिल्लू पाठ के आधार पर समझाइ
3. गिल्लू और लेखिका के मध्य व्यवहार के विषय में लिखिए।
4. महादेवी वर्मा के रेखाचित्र लेखन की विशेषताएँ बताइए।
5. महादेवी वर्मा के साहित्यिक योगदान का उल्लेख कीजिए।

❖ ❖ ★ ❖ ❖

मेरी अस्वस्थता में वह तकिये पर सिरहाने बैठकर अपने नन्हे-नन्हे पं[illegible] मेरे सिर और बालों को इतने हौले-हौले सहलाता रहता कि उसका हटना[illegible] परिचारिका के हटने के समान लगता।

गर्मियों में जब मैं दोपहर में काम करती रहती तो गिल्लू न बाहर जा[illegible] अपने झूले में बैठता।

उसने मेरे निकट रहने के साथ गर्मी से बचने का सर्वथा नया उपाय [illegible] निकाला था। वह मेरे पास रखी सुराही पर लेट जाता और इस प्रकार समी[illegible] रहता और ठंडक में भी रहता।

गिलहरियों के जीवन की अवधि दो वर्ष से अधिक नहीं होती, अतः [illegible] की जीवन-यात्रा का अंत आ ही गया। दिन भर उसने न कुछ खाया और न [illegible] गया। रात में अंत की यातना में भी वह मेरी वही उँगली पकड़कर हाथ से चि[illegible] गया, जिसे उसने अपने बचपन की मरणासन्न स्थिति में पकड़ा था।

पंजे इतने ठंडे हो रहे थे कि मैंने जागकर हीटर जलाया और उसे उष्[illegible] देने का प्रयत्न किया। परंतु प्रभात की प्रथम किरण के स्पर्श के साथ ही वह कि[illegible] और जीवन में जागने के लिए सो गया।

उसका झूला उतारकर रख दिया गया और खिड़की की जाली बंद कर [illegible] गई है, परंतु गिलहरियों की नयी पीढ़ी जाली के उस पार चिक-चिक करती [illegible] रहती है और सोनजुही पर बसंत आता ही रहता है।

सोनजुही की लता के नीचे गिल्लू को समाधि दी गई है, इसलिए भी कि उसे वह लता सबसे अधिक प्रिय थी, इसलिए भी कि उस लघुगात का, कि[illegible] वासंती दिन, जूही के पीताभ छोटे फूल में खिल जाने का विश्वास मुझे संतोष दे[illegible] है।

संदर्भ ग्रंथ

1. महादेवी वर्मा- मेरा परिवार, लोकभारती प्रकाशन, 2008
2. डॉ. नगेन्द्र (संपादन) हिन्दी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली
33. International Journal of Hindi Research ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22 www.hindijournal.com Volumew; Issuel; Januray 2016; Page- 48-50

4. संस्मरण (महादेवी वर्मा), इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली http://egyankosh.ac.in//handle/123456789/70708

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. गिल्लू का प्रिय खाद्य क्या था -
   (क) अमरूद (ख) अनार
   (ग) काजू (घ) फूलों का रस
2. कागभुशुंण्डि किसका सम्मानित नाम है-
   (क) गरुड़ (ख) कौवा
   (ग) हंस (घ) मयूर
3. पितृ पक्ष में किस पक्षी का आह्वान किया जाता है-
   (क) मयूर (ख) कौआ
   (ग) हंस (घ) कोयल
4. गिलहरी के जीवन की अवधि होती है-
   (क) तीन वर्ष (ख) दो वर्ष
   (ग) चार वर्ष (घ) छह वर्ष

55. गिल्लू शब्द है-
   (क) व्यक्तिवाचक संज्ञा का जातिवाचक रूप
   (ख) भाववाचक संज्ञा का व्यक्तिवाचक रूप
   (ग) जातिवाचक संज्ञा का व्यक्तिवाचक रूप
   (घ) समूहवाचक संज्ञा का जातिवाचक रूप

6. गिल्लू ने अपने अंतिम समय में लेखिका के किस अंग को पकड़ा था-
   (क) उँगली (ख) अँगूठा
   (ग) कन्धा (घ) पैर
7. गिल्लू को समाधि कहाँ दी गयी-
   (क) सोनजुही की लता के नीचे (ख) लेखिका के बरामदे में
   (ग) अस्पताल के मैदान में (घ) बरगद के नीचे
8. महादेवी वर्मा ने किस साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन किया-

कई घंटों के उपचार के उपरांत उसके मुँह में एक बूँद पानी टपकाया सका। तीसरे दिन वह इतना अच्छा और आश्वस्त हो गया कि मेरी उँगली को दो नन्हे पंजों से पकड़ कर, नीले काँच के मोतियों जैसी आँखों से इधर-उधर देखने लगा।

तीन-चार मास में उसके स्निग्ध रोएँ, झब्बेदार पूँछ और चंचल चमकीली आँखें सबको विस्मित करने लगीं।

हमने उसकी जातिवाचक संज्ञा को व्यक्तिवाचक का रूप दे दिया और इस प्रकार हम उसे गिल्लू कहकर बुलाने लगे। मैंने फूल रखने की एक हल्की डलिया में रुई बिछाकर उसे तार से खिड़की पर लटका दिया। वही दो वर्ष गिल्लू का घर रहा। वह स्वयं हिला कर अपने घर में झूलता और अपनी काँच के मनकों-सी आँखों से कमरे के भीतर और खिड़की से बाहर न जाने क्या देखता-समझता रहता था, परंतु उसकी समझदारी और कार्यकलाप पर सबको आश्चर्य होता था।

जब मैं लिखने बैठती, तब अपनी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करने की इतनी तीव्र इच्छा होती थी कि उसने एक अच्छा उपाय खोज निकाला।

वह मेरे पैर तक आकर सर्र से परदे पर चढ़ जाता और फिर उसी द्रुत से उतरता। उसका यह दौड़ने का क्रम तब तक चलता, जब तक मैं उसे पकड़ने के लिए न उठती।

कभी मैं गिल्लू को पकड़ कर एक लंबे लिफाफे में इस प्रकार रख देती कि उसके अगले दो पंजों और सिर के अतिरिक्त सारा लघुगात लिफाफे के भीतर बंद रहता। इस अद्‌भुत स्थिति में कभी-कभी घंटों मेज़ पर दीवार के सहारे खड़े रहकर वह अपनी चमकीली आँखों से मेरा कार्यकलाप देखा करता।

भूख लगने पर चिक्-चिक् करके मानो वह मुझे सूचना देता और कभी या बिस्कुट मिल जाने पर उसी स्थिति में लिफ़ाफ़े से बाहर वाले पंजों से पकड़ कर उसे कुतरता रहता।

फिर गिल्लू के जीवन का प्रथम बसंत आया। नीम-चमेली की गंध मेरे कक्ष में हौले-हौले आने लगी। बाहर की गिलहरियाँ खिड़की की जाली के पास आकर चिक-चिक करके न जाने क्या कहने लगीं।

गिल्लू को जाली के पास बैठकर अपनेपन से बाहर झाँकते देख कर मुझे लगा कि इसे मुक्त करना आवश्यक है। मैंने कीलें निकालकर जाली का एक कोना

खोल दिया और इस मार्ग से गिल्लू ने बाहर जाने पर सचमुच ही मुक्ति की साँस ली। इतने छोटे जीव को घर में पले कुत्ते-बिल्लियों से बचाना भी एक समस्या ही थी।

आवश्यक कागज-पत्रों के कारण मेरे बाहर जाने पर कमरा बंद ही रहता है। मेरे कॉलेज से लौटने पर जैसे ही कमरा खोला गया और मैंने भीतर पैर रखा, वैसी ही गिल्लू अपने जाली के द्वार से भीतर आकर मेरे पैर से सिर और सिर से पैर तक दौड़ लगाने लगा। तब से यह नित्य का क्रम हो गया।

मेरे कमरे से बाहर जाने पर वह भी खिड़की की खुली जाली की राह बाहर चला जाता और दिन भर गिलहरियों के झुंड का नेता बना, हर डाल पर उछलता-कूदता रहता और ठीक चार बजे वह खिड़की से भीतर आकर अपने झूले में झूलने लगता।

मुझे चौंकाने की इच्छा उसमें न जाने कब और कैसे उत्पन्न हो गई थी। कभी फूलदान के फूलों में छिप जाता, कभी परदे की चुन्नट में और कभी सोनजुही की पत्तियों में।

मेरे पास बहुत से पशु-पक्षी हैं और उनका मुझसे लगाव भी कम नहीं है, परंतु उनमें से किसी को मेरे साथ मेरी थाली में खाने की हिम्मत हुई है, ऐसा मुझे स्मरण नहीं आता।

गिल्लू इनमें अपवाद था। मैं जैसे ही खाने के कमरे में पहुँचती, वह खिड़की से निकलकर आँगन की दीवार, बरामदा पार करके मेज पर पहुँच जाता और मेरी थाली में बैठ जाना चाहता। बड़ी कठिनाई से मैंने उसे थाली के पास बैठना सिखाया, जहाँ बैठकर वह मेरी थाली में से एक-एक चावल उठाकर बड़ी सफाई से खाता रहता। काजू उसका प्रिय खाद्य था और कई दिन काजू न मिलने पर वह अन्य खाने की चीजें या तो लेना बंद कर देता था या झूले से नीचे फेंक देता था।

उसी बीच मुझे मोटर दुर्घटना में आहत होकर कुछ दिन अस्पताल में रहना पड़ा। उन दिनों जब मेरे कमरे का दरवाजा खोला जाता, गिल्लू अपने झूले से उतर कर दौड़ता और फिर किसी दूसरे को देखकर तेज़ी से अपने घोंसले में जा बैठता। सब उसे काजू दे जाते, परंतु अस्पताल से लौटकर जब मैंने उस झूले की सफाई की तो उसमें काजू भरे मिले, जिनसे ज्ञात होता था कि वह उन दिनों अपना प्रिय खाद्य कितना कम खाता रहा।

में गिल्लू को केन्द्रीयता दी गई है। लेखिका की गिल्लू पर नजर तब पड़ती है
गमले के पीछे गिल्लू जैसे लघुप्राण पर कौवे चोंच मार रहे हैं। जनश्रुति है
की चोंच से घायल जीव की मृत्यु ही होती है पर लेखिका गिल्लू की चिकि
सेवा करती है, जिससे गिल्लू स्वस्थ हो जाता है। तीसरे दिन लेखिका की
अपने नन्हें पंजों से पकड़कर इधर-उधर देखने लगता है। गिल्लू की चंचलता
लेखिका को अपने हिस्से का स्नेह और प्रेम के लिए विवश कर देता है। 'गि
की कहानी सोनजही के पीताभ छोटे-छोटे फलों के खिल जाने के विश्वास के आ
पास घूमती है। इस गिल्लू कथा में लेखिका का संवेदनशील एवं करुणा भरे ह
से परिचय होता है। दुर्घटनाग्रस्त होकर अस्पताल के दिनों में लेखिका महसूस क
है कि जिस प्रकार की आत्मीयता उन्हें मनुष्यों से प्राप्त होती है वैसे ही निरीह जं
से भी मिलती रही है। गिल्लू को ज्ञात है कि लेखिका अस्पताल में है, वह लेखि
को न पाकर भोजन करना कम कर देता है। काजू उसका प्रिय होने पर भी
उसे नहीं खाता। गिल्लू की मानसिक चंचलता को महादेवी वर्मा ने मार्मिक ढंग
रेखांकित किया है। मेरी अस्वस्थता में वह तकिये पर सिरहाने बैठकर अपने नन्हें
नन्हें पंजों से मेरे सिर और बालों को इतने हौले-हौले सहलाता रहा कि उसक
हटना एक परिचारिका के हटने के समान लगता। गिल्लू की कहानी के माध्यम
लेखिका ने यह प्रमाणित किया है कि पशु-पक्षियों का व्यवहार भी मनुष्य तुल्य
होता है। वे मानवीय गुणों से भी युक्त होते हैं। लेखिका ने अपनी जीवन-यात्रा
अनेक पशु-पक्षी पाले उनमें से गिल्लू भी उनका एक पारिवारिक सदस्य है। आधुनि
समय में जीवन मूल्यों में पैदा हो रहे संकटों के बीच गिल्लू जैसी कहानियाँ मनु
जीवन के लिए ऊर्जा स्रोत की तरह हैं।

'गिल्लू' संस्मरण और रेखाचित्र की मिली-जुली प्रकृति से रचित कहानी है।
एक सामान्य से जीवन, लघु जीवन वाले प्राणी गिल्लू के मनुष्य के जीवन से जुड़ाव
को संवेदात्मक ढंग से लेखिका ने प्रस्तुत किया है। यहाँ पीड़ा, वेदना और करुणा
के साथ-साथ सहज मैत्री को व्यक्त किया गया है। लेखिका के शब्दों में जातिवाचक
संज्ञा व्यक्तिवाचक हो जाती है और गिल्लू जैसा सम्बोधन अत्यधिक स्नेह का प्रतीक
बन जाता है।

गिल्लू

सोनजुही में आज एक पीली कली लगी है। इसे देखकर अनायास ही उस छोटे जीव का स्मरण हो आया जो इस लता की सघन हरीतिमा में छिप कर बैठता था और फिर मेरे निकट पहुँचते ही कंधे पर कूद कर मुझे चौंका देता था। तब मुझे कली की खोज रहती थी, पर आज उस लघुप्राण की खोज है।

परंतु वह तो अब तक इस सोनजुही की जड़ में मिट्टी होकर मिल गया होगा। कौन जाने स्वर्णिम कली के बहाने वही मुझे चौंकाने ऊपर आ गया हो।

अचानक एक दिन सबेरे कमरे से बरामदे में आकर मैंने देखा, दो कौवे एक गमले में चारों ओर चोंचों से छुआ-छुऔवल जैसा खेल खेल रहे हैं।

यह काकभुशुंडि भी विचित्र पक्षी है- एक साथ समादरित, अनादरित, अति सम्मानित, अति अवमानित।

हमारे बेचारे पुरखे न गरुड़ के रूप में आ सकते हैं, न मयूर के, न हंस के, उन्हें पितरपक्ष में हमसे कुछ पाने के लिए काक बनकर ही अवतीर्ण होना पड़ता है। इतना ही नहीं, हमारे दूरस्थ प्रियजनों को भी अपने आने का मधु संदेश इनके कर्कश स्वर में ही देना पड़ता है। दूसरी ओर हम कौवा और काँव-काँव करने को अवमानना के अर्थ में ही प्रयुक्त करते हैं।

मेरे काकपुराण के विवेचन में अचानक बाधा आ पड़ी, क्योंकि गमले और दीवार की संधि में छिपे एक छोटे-से जीव पर मेरी दृष्टि रुक गई। निकट जाकर देखा, गिलहरी का छोटा-सा बच्चा है, जो संभवतः घोंसले से गिर पड़ा है और अब कौवे जिसमें सुलभ आहार खोज रहे हैं।

काकद्वय की चोंचों के दो घाव उस लघुप्राण के लिए बहुत थे। अतः वह निश्चेष्ट-सा गमले से चिपका पड़ा था।

सबने कहा, कौवे की चोंच का घाव लगने के बाद यह बच नहीं सकता, अतः इसे ऐसे ही रहने दिया जावे।

परंतु मन ही नहीं माना उसे हौल से उठाकर अपने कमरे में लाई, फिर रुई से रक्त पोंछकर घावों पर पेन्सिलिन का मरहम लगाया। रुई की पतली बत्ती दूध में भिगोकर जैसे-तैसे उसके नन्हें से मुँह में लगाई, पर मुँह खुल न सका और दूध की बूँदें दोनों ओर ढुलक गईं।

कवि सम्मेलन करवाया था। सुमित्रानंदन पंत और सूर्यकांत त्रिपाठी निराला उन्हें भाई की तरह मिले और अंतिम समय तक सम्बन्धों के प्रति वे सजग रहे। 'पथ के साथी' में उन्होंने दद्दा मैथिली शरण गुप्त से लेकर संत राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन तक का उल्लेख किया है और प्रत्येक के सम्बन्ध में सार्थक अध्याय लिखे हैं।

महादेवी वर्मा को कवयित्री के रूप में प्रतिष्ठित करते वाले काव्य संग्रह हैं- नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत. दीपशिखा. सप्तपर्णा, प्रथम आयाम और 'अग्नि रेखा'। इन संग्रहों में आधुनिक गीतों की प्रधानता है। भाव तन्मयता, संयम और अभिव्यक्ति के स्तर पर नारी सुलभ शालीनता इन गीतों को सर्वथा नयी पृष्ठभूमि पर प्रतिष्ठित कर देती है।

गद्य लेखन की दृष्टि से- अतीत के चलचित्र और स्मृति की रेखाएँ (रेखाचित्र विधा) पथ के साथी, मेरा परिवार (संस्मरण विधा), संभाषण (समय-समय पर दिये गए वक्तव्य), शृंखला की कड़ियाँ (विवेचनात्मक गद्य), साहित्यकार की आस्था और अन्य निबंध (विचारात्मक निबंध), क्षणदा (ललित निबंध) और हिमालय (विविध संग्रह) प्रमुख हैं। सम्पादन के क्षेत्र में तत्कालीन पत्रिका चाँद का सम्पादन किया।

साहित्यिक प्रदेय की दृष्टि से उन्हें मंगलाप्रसाद, भारत भारती, ज्ञानपीठ इत्यादि पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। उन्हें पद्म विभूषण जैसा प्रतिष्ठित भारतीय पुरस्कार भी प्राप्त हुआ।

महादेवी के गद्य और पद्य दोनों में ही सम्पूर्ण जीवन की विविधता का बोध होता है। उनकी पीड़ा भरे मार्मिक दृश्य मनुष्य मात्र के लिए विरेचन का कार्य करते हैं। इन विषयों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है, पाठक की मानसिकता को स्वस्थ करने में हिन्दी साहित्य में महिला रचनाकारों की दृष्टि से वे सर्वोच्च हैं और उनका साहित्य आज भी नव रचनाकारों के लिए प्रेरक है।

महादेवी वर्मा द्वारा रचित 'गिल्लू' गद्य संकलन 'मेरा परिवार' में संकलित है। इस संकलन में गिल्लू के अतिरिक्त नीलकण्ठ (मोर), सोना (हिरणी), दुर्मुख (खरगोश), गौरा (गाय), नीलू (कुत्ते), निक्की (नेवले), रोजी (कुतिया) तथा रानी (घोड़ी) के संस्मरण संकलित हैं। प्रत्येक मानवेत्तर प्राणी की विशिष्टता, रंगों और लक्षणों का वर्णन पाठक की स्मृति में सहज ही अंकित हो जाते हैं। 'गिल्लू' लोकप्रिय कहानी है और इसका कारण मानवीय संवेदनाओं से भरी हुई होना है। पूरी कहानी

4.
महादेवी वर्मा

परिचय

महादेवी वर्मा का संबन्ध भारतीय साहित्य में आधुनिक रहस्यवाद से है। हि
हम हिन्दी छायावाद के समानान्तर पाते हैं। वे मूलतः कवयित्री हैं और प्रत्यी
दर्शन के माध्यम से अपना सर्वोत्तम अभिव्यक्त करती हैं। वे मध्ययुगीन रहस्यक
प्रवृत्तियों से पृथक पथ का सृजन करती हैं तथा वैयक्तिक अनुभूतियों को आध्यात्मि
चेतना के माध्यम से मानवीय संवेदना और प्रकृति के प्रति जिज्ञासाओं से जोड़ ह
हैं। महादेवी वर्मा का लक्ष्य सम्पूर्ण वसुंधरा की करुणा को पाना है। उनके गी
की लम्बी शृंखला है जिसके कारण उन्हें आधुनिक मीरा की संज्ञा दी गई
सामाजिक यथार्थ और मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने गद्य
अपनाया तथा रेखाचित्रों, संस्मरणों, निबंधों, समीक्षा और विभिन्न पत्रिकाओं
सम्पादन के माध्यम से समाज के मनुष्यों और मनुष्येत्तर के प्रति अपना दृष्टिको
स्पष्ट किया। वे संस्मरण तथा रेखाचित्र लेखन में शीर्षस्थ हैं। उनकी कविताओं औ
गद्य दोनों में पीड़ा व वेदना की प्रमुखता है। वे भारत की स्वतंत्रता के संघर्ष
स्त्री संसार का नेतृत्व करती हैं तथा उनकी चिन्ताओं को समाधान देती हैं। उन
परिवार में सभी प्रकार के जीव हैं और जीवन के प्रति उत्कट अभिलाषाओं औ
संवेदनाओं को सम्पूर्णता देती हैं।

महादेवी वर्मा (26 मार्च, 1907–11 सितम्बर, 1987) का जन्म फर्रुखाबा
उत्तरप्रदेश में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा इंदौर, मध्यप्रदेश में तथा कार्यक्षेत्र प्रयाग
इलाहाबाद रहा। उनके व्यक्तित्व के निर्माण में शिक्षक परिवार का वातावरण है। उन्हों
अपने जीवन का सर्वोत्तम अकादमिक संस्थान प्रयाग महिला विद्यापीठ को दिया
उनके परिवार का उल्लेख सामान्य गृहस्थी की दृष्टि से नहीं किया जा सकता। उनके
परिवार में अनेक लोग सम्मिलित हैं। सभी के प्रति उनका व्यवहार पारिवारिक
रहा। श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान की सहायता से उन्होंने पहला

4. अमरकांत को कौन-कौन से पुरस्कार मिले, नाम लिखिए?
5. कहानी में कुल कितने पात्र हैं, उनके नाम लिखिए?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. 'दोपहर का भोजन' कहानी का सार लिखिए।
2. 'दोपहर का भोजन' कहानी की मूल संवेदनाएँ क्या हैं?
3. 'दोपहर का भोजन' गरीबी में भी मानवीय मूल्यों का संरक्षण करती है' इस कथन की समीक्षा कीजिए।
4. सिद्धेश्वरी परिवार को बचाने के लिए क्या-क्या करती है?
5. अमरकांत का साहित्यिक परिचय दीजिए?

❖ ❖ ★ ❖ ❖

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1 'दोपहर का भोजन' कहानी पहली बार किस पत्रिका में प्रकाशित हुई?
(क) सरस्वती (ख) कहानी
(ग) हंस (घ) प्रतीक

2. 'मोहन' सिद्धेश्वरी के किस क्रम का पुत्र है-
(क) बड़का (ख) मँझला
(ग) छोटा (घ) इनमें से कोई नहीं

3. सिद्धेश्वरी के तीसरे पुत्र का क्या नाम है-
(क) प्रमोद (ख) मोहन
(ग) रामचन्द्र (घ) चन्द्रिका प्रसाद

4. सिद्धेश्वरी को किससे डर लगता था-
(क) अपने पति से (ख) अपने दोनों लड़कों से
(ग) अपने घर से (घ) दोपहर की धूप से

5. सिद्धेश्वरी के हिस्से में कितनी रोटी आती है-
(क) आधी रोटी (ख) एक रोटी
(ग) दो रोटी (घ) डेढ़ रोटी

6. अमरकांत कहानी के किस आन्दोलन से जुड़े थे-
(क) नई कहानी (ख) सहज कहानी
(ग) अकहानी (घ) सचेतन कहानी

7. अमरकांत को मध्यप्रदेश का कौन-सा पुरस्कार मिला-
(क) शिखर सम्मान (ख) मैथिलीशरण गुप्त सम्मान
(ग) तानसेन सम्मान (घ) कालिदास सम्मान

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. 'दोपहर का भोजन' कहानी शीर्षक के औचित्य पर प्रकाश डालिए।
2. कहानी के पात्र खाते समय रोटी न लेने का बहाना क्यों करते हैं?
3. "मुंशी जी औंधे मुँह होकर निश्चिंत
भाव व्यक

दुरुस्त होगा। हाँ, रोटी खाते-खाते नाक में दम आ गया है।' यह कहकर वे ठहाका मारकर हँस पड़े।

मुंशी जी के निबटने के पश्चात सिद्धेश्वरी उनकी जूठी थाली लेकर चौके की जमीन पर बैठ गई। बटलोई की दाल को कटोरे में उड़ेल दिया, पर वह पूरा भरा नहीं। छिपुली में थोड़ी-सी चने की तरकारी बची थी, उसे पास खींच लिया। रोटियों की थाली को भी उसने पास खींच लिया। उसमें केवल एक रोटी बची थी। मोटी-भद्दी और जली उस रोटी को वह जूठी थाली में रखने जा रही थी कि अचानक उसका ध्यान ओसारे में सोए प्रमोद की ओर आकर्षित हो गया। उसने लड़के को कुछ देर तक एकटक देखा, फिर रोटी को दो बराबर टुकड़ों में विभाजित कर दिया। एक टुकड़े को तो अलग रख दिया और दूसरे टुकड़े को अपनी जूठी थाली में रख लिया। तदुपरांत एक लोटा पानी ले कर खाने बैठ गई। उसने पहला ग्रास मुँह में रखा और तब न मालूम कहाँ से उसकी आँखों से टप-टप आँसू चूने लगे।

सारा घर मक्खियों से भनभन कर रहा था। आँगन की अलगनी पर एक गंदी साड़ी टँगी थी, जिसमें पैबंद लगे हुए थे। दोनों बड़े लड़कों का कहीं पता नहीं था। बाहर की कोठरी में मुंशी जी औंधे मुँह होकर निश्चिंतता के साथ सो रहे थे, जैसे डेढ़ महीने पूर्व मकान-किराया नियंत्रण विभाग की क्लर्की से उनकी छँटनी न हुई हो और शाम को उनको काम की तलाश में कहीं जाना न हो।

संदर्भ

1. जिंदगी और जोंक, कहानी संग्रह- अमरकांत, फरवरी 1938 भार्गव प्रेम, इलाहाबाद
2. कथा साहित्य के सौ बरस, संपादक- विभूति नारायण प्रकाशन, शिल्पायन, शहादरा, दिल्ली
3. अमरकांत का कथा साहित्य, बहादुर सिंह परमार, शिल्पायन, शहादरा दिल्ली- 2008
4. अमरकांत की कहानी, रवीन्द्र कालिया
5. हिन्दी समय डाट काम
6. विकीपीडिया
7. ई.पी.जी. पाठशाला

रहा था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे। वह चाहती थी
सभी चीजें ठीक से पूछ ले। सभी चीजें ठीक से जान ले और दुनिया की हर
पर पहले की तरह धड़ल्ले से बात करे। पर उसकी हिम्मत नहीं होती थी।
दिल में जाने कैसा भय समाया हुआ था।

अब मुंशी जी इस तरह चुपचाप दुबके हुए खा रहे थे, जैसे पिछले दो
से मौन-व्रत धारण कर रखा हो और उसको कहीं जाकर आज शाम को
वाले हों।

सिद्धेश्वरी से जैसे नहीं रहा गया। बोली, 'मालूम होता है, अब बारिश
होगी।'

मुंशी जी ने एक क्षण के लिए इधर-उधर देखा, फिर निर्विकार स्वर में
दी, 'मक्खियाँ बहुत हो गई हैं।'

सिद्धेश्वरी ने उत्सुकता प्रकट की, 'फूफा जी बीमार हैं, कोई समाचार
आया।'

मुंशी जी ने चने के दानों की ओर इस दिलचस्पी से दृष्टिपात किया,
उनसे बातचीत करने वाले हों। फिर सूचना दी, गंगाशरण बाबू की लड़की की
तय हो गई। लड़का एम.ए. पास है।

सिद्धेश्वरी हठात चुप हो गई। मुंशी जी भी आगे कुछ नहीं बोले।
खाना समाप्त हो गया था और वे थाली में बचे-खुचे दानों को बंदर की तरह
रहे थे।

सिद्धेश्वरी ने पूछा, 'बड़का की कसम एक रोटी देती हूँ। अभी बहुत-
हैं।'

मुंशी जी ने पत्नी की ओर अपराधी के समान तथा रसोई की ओर कन
से देखा, तत्पश्चात किसी छँटे उस्ताद की भाँति बोले, 'रोटी? रहने दो, पेट का
भर चुका है। अन्न और नमकीन चीजों से तबीयत ऊब भी गई है। तुमने व्य
में कसम धरा दी। खैर, कसम रखने के लिए ले रहा हूँ। गुड़ होगा क्या?' सिद्धेश्व
ने बताया कि हंडिया में थोडा-सा गुड़ है।

मुंशी जी ने उत्साह के साथ कहा, 'तो थोड़े गुड़ का ठंडा रस बनाओ, पीऊँग
तुम्हारी कसम भी रह जाएगी, जायका भी बदल जाएगा, साथ ही साथ हाजमा

दो रोटियाँ, कटोरा-भर दाल, चने की तली तरकारी। मुंशी चंद्रिका प्रसाद पीढ़े पर पालथी मार कर बैठे रोटी के एक-एक ग्रास को इस तरह चुभला-चबा रहे थे, जैसे बूढ़ी गाय जुगाली करती है। उनकी उम्र पैंतालीस वर्ष के लगभग थी, किंतु पचास-पचपन के लगते थे। शरीर का चमड़ा झूलने लगा था, गंजी खोपड़ी आईने की भाँति चमक रही थी। गंदी धोती के ऊपर अपेक्षाकृत कुछ बनियान तार-तार लटक रही थी।

मुंशी जी ने कटोरे को हाथ में लेकर दाल को थोड़ा सुड़कते हुए पूछा, 'बड़का दिखाई नहीं दे रहा?' सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आ रहा था कि उसके दिल में क्या हो गया है जैसे कुछ काट रहा हो। पंखे को जरा और जोर से घुमाती हुई बोली, 'अभी-अभी खा कर काम पर गया है। कह रहा था कुछ दिनों में नौकरी लग जाएगी।। हमेशा बाबू जी, बाबू जी किए रहता है। बोला बाबू जी देवता के समान हैं।'

मुंशी जी के चेहरे पर कुछ चमक आई। शरमाते हुए पूछा, 'ऐ, क्या कहता था कि बाबू जी देवता के समान हैं? बड़ा पागल है।'

सिद्धेश्वरी पर जैसे नशा चढ़ गया था। उन्माद की रोगिणी की भाँति बड़बड़ाने लगी, 'पागल नहीं है, बड़ा होशियार है। उस जमाने का कोई महात्मा है। मोहन तो उसकी बड़ी इज्जत करता है। आज कह रहा था कि भैया की शहर में बड़ी इज्जत होती है, पढ़ने-लिखने वालों में बड़ा आदर होता है और बड़का तो छोटे भाइयों पर जान देता है। दुनिया में वह सब कुछ सह सकता है पर यह नहीं देख सकता कि उसके प्रमोद को कुछ हो जाए।'

मुंशी जी दाल लगे हाथ को चाट रहे थे। उन्होंने सामने की ताक की ओर देखते हुए हँस कर कहा, 'बड़का का दिमाग तो खैर काफी तेज है, वैसे लड़कपन में नटखट भी था। हमेशा खेल-कूद में लगा रहता था। असल तो यह कि तीनों लड़के काफी होशियार हैं। प्रमोद को कम समझती हो?' यह कहकर वह अचानक जोर से हँस पड़े।

मुंशी जी डेढ़ रोटी खा चुकने के बाद एक ग्रास से युद्ध कर रहे थे। कठिनाई होने पर एक गिलास पानी चढ़ा गए। फिर खर-खर खाँस कर खाने लगे।

फिर चुप्पी छा गई। दूर से किसी आटे की चक्की की पुक-पुक आवाज सुनाई दे रही थी और पास की नीम के पेड़ पर बैठा कोई पंडूक लगातार बोल

मोहन ने रोटी के एक बड़े ग्रास को निगलने की कोशिश करते अस्वाभाविक मोटे स्वर में जवाब दिया,' कहीं पर तो नहीं गया था। यहीं पर

सिद्धेश्वरी वहीं बैठकर पंखा डुलाती हुई इस तरह बोली, जैसे स्वय बड़बड़ा रही हो, 'बड़का तुम्हारी बड़ी तारीफ कर रहा था। कह रहा था, प बड़ा दिमागी होगा, उसकी तबीयत चौबीसों घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है।' कह कर उसने अपने मँझले लड़के की ओर इस तरह देखा, जैसे उसने कोई की हो।

मोहन अपनी माँ की ओर देखकर फीकी हँसी हँस पड़ा और फिर में जुट गया। वह परोसी गई दो रोटियों में से एक रोटी कटोरे की तीन-चौ दाल तथा अधिकांश तरकारी साफ कर चुका था।

सिद्धेश्वरी की समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। इन दोनों लड़कों उसे बहुत डर लगता था। अचानक उसकी आँखें भर आईं। वह दूसरी ओर देख लगी।

थोड़ी देर बाद उसने मोहन की ओर मुँह फेरा, तो लड़का लगभग खा समाप्त कर चुका था। सिद्धेश्वरी ने चौंकते हुए पूछा, 'एक रोटी देती हूँ?' मो ने रसोई की ओर रहस्यमय नेत्रों से देखा, फिर सुस्त स्वर में बोला, 'नहीं।'

सिद्धेश्वरी ने गिड़गिड़ाते हुए कहा,' नहीं बेटा, मेरी कसम, थोड़ी ही ले ल तुम्हारे भैया ने एक रोटी ली थी।'

मोहन ने अपनी माँ को गौर से देखा, फिर धीरे-धीरे इस तरह उत्तर दि जैसे कोई शिक्षक अपने शिष्य को समझाता है, 'नहीं रे बस,अव्वल तो अब भ नहीं। फिर रोटियाँ तूने ऐसी बनाई हैं कि खाई नहीं जाती। न मालूम कैसी त रही हैं। खैर, अगर तू चाहती ही है, तो कटोरे में थोड़ी दाल दे दे। दाल ब अच्छी बनी है।'

सिद्धेश्वरी से कुछ कहते न बना और उसने कटोरे को दाल से भर दि

मोहन कटोरे को मुँह लगा कर सुड़-सुड़ पी रहा था कि मुंशी चंद्रिका प्रस जूतों को खस-खस घसीटते हुए आए और राम का नाम ले कर चौकी पर बै गए। सिद्धेश्वरी ने माथे पर साड़ी को कुछ नीचे खिसका लिया और मोहन द को एक साँस में पी कर तथा पानी के लोटे को हाथ में ले कर तेजी से बा चला गया।

रोया। वह बड़ा ही होशियार हो गया है। कहता था, बड़का भैया के यहाँ जाऊँगा। ऐसा लड़का...'

पर वह आगे कुछ नहीं बोल गई, जैसे उसके गले में कुछ अटक गया। कल प्रमोद ने रेवड़ी खाने की जिद पकड़ ली थी और उसके लिए डेढ़ घंटे तक रोने के बाद सोया था।

रामचन्द्र ने कुछ आश्चर्य के साथ अपनी माँ की ओर देखा और फिर सिर नीचा करके कुछ तेजी से खाने लगा।

थाली में जब रोटी का केवल एक टुकड़ा शेष रह गया तो सिद्धेश्वरी ने उठने का उपक्रम करते हुए प्रश्न किया, 'एक रोटी और लाती हूँ?'

रामचन्द्र हाथ से मना करते हुए हड़बड़ा कर बोल पड़ा, 'नहीं -नहीं, जरा भी नहीं। मेरा पेट पहले ही भर चुका है। मैं तो यह भी छोड़ने वाला हूँ। बस, अब नहीं।'

सिद्धेश्वरी ने जिद की, 'अच्छा आधी ही सही।'

रामचन्द्र बिगड़ उठा, 'अधिक खिला कर बीमार कर डालने की तबीयत है क्या? तुम लोग जरा भी नहीं सोचती हो। बस, अपनी जिद। भूख रहती तो क्या ले नहीं लेता?'

सिद्धेश्वरी जहाँ-की-तहाँ बैठी ही रह गई। रामचन्द्र ने थाली में बचे टुकड़े से हाथ खींच लिया और लोटे की ओर देखते हुए कहा, 'पानी लाओ।'

सिद्धेश्वरी लोटा ले कर पानी लेने चली गई। रामचन्द्र ने कटोरे को उँगलियों से बजाया, फिर हाथ को थाली में रख दिया। एक-दो क्षण बाद रोटी के टुकड़े को धीर-से हाथ से उठा कर आँख से निहारा अंत में इधर-उधर देखने के बाद टुकड़े को मुँह में इस सरलता से रख लिया, जैसे भोजन का ग्रास न होकर पान का बीड़ा हो।

मँझला लड़का नाहन आते ही हाथ-पैर धो कर पीढ़े पर बैठ गया। वह कुछ साँवला था और उसकी आँखें छोटी थीं। उसके चेहरे पर चेचक के दाग थे। वह अपने भाई की तरह दुबला-पतला था, किंतु उतना लंबा न था। वह उम्र का अंदाजा कहीं अधिक गंभीर और उदास दिखाई पड़ रहा था।

सिद्धेश्वरी ने उसके सामने थाली रखते हुए प्रश्न किया, 'कहाँ रह गए थे बेटा? भैया पूछ रहा था।

प्रूफरीडरी का काम सीखता था। पिछले साल ही उसने इंटर पास किया था

सिद्धेश्वरी ने खाने की थाली सामने लाकर रख दी और पास ही बैठ पंखा करने लगी। रामचन्द्र ने खाने की ओर दार्शनिक की भाँति देखा। कुल रोटियाँ, भर-कटोरा पनियाई दाल और चने की तली तरकारी।

रामचन्द्र ने रोटी के प्रथम टुकड़े को निगलते हुए पूछा, 'मोहन कहाँ बड़ी कड़ी धूप हो रही है।'

मोहन सिद्धेश्वरी का मँझला लड़का था। उम्र अट्ठारह वर्ष थी और वह साल हाईस्कूल का प्राइवेट इम्तहान देने की तैयारी कर रहा था। वह न मालूम से घर से गायब था और सिद्धेश्वरी को स्वयं पता नहीं था कि वह कहाँ गया

किन्तु सच बोलने की उसकी तबीयत नहीं हुई और झूठ-मूठ उसने क 'किसी लड़के के यहाँ पढ़ने गया है, आता ही होगा। दिमाग उसका बड़ा तेज और उसकी तबीयत चौबीस घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है। हमेशा उसी की करता रहता है।'

रामचन्द्र ने कुछ नहीं कहा। एक टुकड़ा मुँह में रख कर भरा गिलास प पी गया, फिर खाने लग गया। वह काफी छोटे-छोटे टुकड़े तोड़ कर उन्हें धी धीरे चबा रहा था।

सिद्धेश्वरी भय तथा आतंक से अपने बेटे को एकटक निहार रही थी। क्षण बीतने के बाद डरते-डरते उसने पूछा, 'वहाँ कुछ हुआ क्या?'

रामचन्द्र ने अपनी बड़ी-बड़ी भावहीन आँखों से अपनी माँ को देखा, नीचा सिर करके कुछ रूखाई से बोला, 'समय आने पर सब ठीक हो जाएग

सिद्धेश्वरी चुप रही। धूप और तेज होती जा रही थी। छोटे आँगन के आसमान में बादल में एक-दो टुकड़े पाल की नावों की तरह तैर रहे थे। ब की गली से गुजरते हुए एक खड़खड़िया इक्के की आवाज आ रही थी और खट पर सोए बालक की साँस का खर-खर शब्द सुनाई दे रहा था।

रामचन्द्र ने अचानक चुप्पी को भंग करते हुए पूछा, प्रमोद खा चुका

सिद्धेश्वरी ने प्रमोद की ओर देखते हुए उदास स्वर में उत्तर दिया, 'हाँ, चुका।'

से गली निहारने लगी। बारह बज चुके थे। धूप अत्यंत तेज थी और कभी एक-दो व्यक्ति सिर पर तौलिया या गमछा रखे हुए या मजबूती से छाता ताने हुए फुर्ती के साथ लपकते हुए-से गुजर जाते।

दस-पन्द्रह मिनट तक वह उसी तरह खड़ी रही, फिर उसके चेहरे पर व्यग्रता फैल गई और उसने आसमान तथा कड़ी धूप की ओर चिंता से देखा। एक-दो क्षण बाद उसने सिर को किवाड़ से काफी आगे बढ़ा कर गली के छोर की तरफ निहारा, तो उसका बड़ा लड़का रामचन्द्र धीरे-धीरे घर की ओर सरकता नजर आया।

उसने फुर्ती से एक लोटा पानी ओसारे की चौकी के पास नीचे रख दिया और चौके में जाकर खाने के स्थान को जल्दी-जल्दी पानी से लीपने-पोतने लगी। वहाँ पीढ़ा रख कर उसने सिर को दरवाजे की ओर घुमाया ही था कि रामचन्द्र ने अंदर कदम रखा।

रामचन्द्र आकर धम से चौकी पर बैठ गया और फिर वहीं बेजान-सा लेट गया। उसका मुँह लाल तथा चढ़ा हुआ था, उसके बाल अस्त-व्यस्त थे और उसके फटे-पुराने जूतों पर गर्द जमी हुई थी।

सिद्धेश्वरी की पहले हिम्मत नहीं हुई कि उसके पास आए और वहीं से वह भयभीत हिरनी की भाँति सिर उचका-घुमा कर बेटे को व्यग्रता से निहारती रही। किन्तु लगभग दस मिनट बीतने के पश्चात भी जब रामचन्द्र नहीं उठा, तो वह घबरा गई। पास जाकर पुकारा- बड़कू बड़कू! लेकिन उसके कुछ उत्तर न देने पर डर गई और लड़के के नाक के पास हाथ रख दिया। साँस ठीक से चल रही थी। फिर सिर पर हाथ रख कर देखा, बुखार नहीं था। हाथ के स्पर्श से रामचन्द्र ने आँखें खोलीं। पहले उसने माँ की ओर सुस्त नजरों से देखा, फिर झट से उठ बैठा। जूते निकालने और नीचे रखे लोटे के जल से हाथ-पैर धोने के बाद वह यंत्र की तरह चौकी पर आकर बैठ गया।

सिद्धेश्वरी ने डरते-डरते पूछा, 'खाना तैयार है। यहीं लगाऊँ क्या?'

रामचन्द्र ने उठते हुए प्रश्न किया, 'बाबू जी खा चुके?' सिद्धेश्वरी ने चौके की ओर भागते हुए उत्तर दिया, 'आते ही होंगे।'

रामचन्द्र पीढ़े पर बैठ गया। उसकी उम्र लगभग इक्कीस वर्ष की थी। लंबा, दुबला-पतला, गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आँखें तथा होठों पर झुर्रियाँ।

वह एक स्थानीय दैनिक समाचार-पत्र के दफ्तर में अपनी तबीयत से

में रख लिया। तदुपरांत एक लोटा पानी लेकर खाने बैठ गई।'' एक लो
का यह संकेत दो बार आया है। पहले खाली पेट पानी पीती है और अ
रोटी के साथ। नायिका सिद्धेश्वरी के माध्यम से परिवार की पीड़ा और हताश
बार सामने आती है पर रचनाकार सिद्धेश्वरी के परिवार बचाने की आक
संभाल ले जाते हैं। कहानी के पात्र गरीबी और भूख के बावजूद कहीं भी
आत्मीयता को टूटने नहीं देते। सिद्धेश्वरी अपने संवादों के माध्यम से ऐस
में सफल होती है। धन के अभाव में घर चलाना और परिवार के सभी
को जोड़े रखना, सोचते-सोचते आँखों से आँसू निकल पड़ना ऐसे कठिन
कि कहानी बहुत अधिक कारुणिक हो जाती है।

अपने समग्र रूप में यह कहानी निम्न-मध्य वर्ग के भारतीय परि
जीवन्त दस्तावेज है जहाँ भूख रिश्ते को तोड़ते नहीं, अमानवीय नहीं होने
और एक भारतीय माँ ऐसा करने में सफल होती है।

दोपहर का भोजन

(कहानी)

सिद्धेश्वरी ने खाना बनाने के बाद चूल्हे को बुझा दिया और दोनों
के बीच सिर रखकर शायद पैर की उँगलियाँ या जमीन पर चलते चींटें-च
को देखने लगी।

अचानक उसे मालूम हुआ कि बहुत देर बाद से उसे प्यास नहीं लगी है। म
की तरह उठी और गगरे से लोटा भर पानी लेकर गट-गट चढ़ा गई। खाली
उसके कलेजे में लग गया और वह हाय राम कहकर वहीं जमीन पर लेट ग

आधे घंटे तक वहीं उसी तरह पड़ी रहने के बाद उसके जी में जी आ
वह बैठ गई, आँखों को मल-मल कर इधर-उधर देखा और फिर उसकी दृष्टि औ
में अध-टूटे खटोले पर सोए अपने छह वर्षीय लड़के प्रमोद पर जम गई।

लड़का नंग-धड़ंग पड़ा था। उसके गले तथा छाती की हड्डियाँ साफ दि
देती थीं। उसके हाथ-पैर बासी ककड़ियों की तरह सूखे तथा बेजान पड़े थे
उसका पेट हंडिया की तरह फूला हुआ था। उसका मुख खुला हुआ था और
पर अनगिनत मक्खियाँ उड़ रही थीं।

वह उठी, बच्चे के मुँह पर अपना एक फटा, गंदा ब्लाउज डाल दिया
एक-आध मिनट सुन्न खड़ी रहने के बाद बाहर दरवाजे पर जाकर किवाड़ की

से गली निहारने लगी। बारह बज चुके थे। धूप अत्यंत तेज थी और कभी एक-दो व्यक्ति सिर पर तौलिया या गमछा रखे हुए या मजबूती से छाता ताने हुए फुर्ती के साथ लपकते हुए-से गुजर जाते।

दस-पन्द्रह मिनट तक वह उसी तरह खड़ी रही, फिर उसके चेहरे पर व्यग्रता फैल गई और उसने आसमान तथा कड़ी धूप की ओर चिंता से देखा। एक-दो क्षण बाद उसने सिर को किवाड़ से काफी आगे बढ़ा कर गली के छोर की तरफ निहारा, तो उसका बड़ा लड़का रामचन्द्र धीरे-धीरे घर की ओर सरकता नजर आया।

उसने फुर्ती से एक लोटा पानी ओसारे की चौकी के पास नीचे रख दिया और चौके में जाकर खाने के स्थान को जल्दी-जल्दी पानी से लीपने-पोतने लगी। वहाँ पीढ़ा रख कर उसने सिर को दरवाजे की ओर घुमाया ही था कि रामचन्द्र ने अंदर कदम रखा।

रामचन्द्र आकर धम से चौकी पर बैठ गया और फिर वहीं बेजान-सा लेट गया। उसका मुँह लाल तथा चढ़ा हुआ था, उसके बाल अस्त-व्यस्त थे और उसके फटे-पुराने जूतों पर गर्द जमी हुई थी।

सिद्धेश्वरी की पहले हिम्मत नहीं हुई कि उसके पास आए और वहीं से वह भयभीत हिरनी की भाँति सिर उचका-घुमा कर बेटे को व्यग्रता से निहारती रही। किन्तु लगभग दस मिनट बीतने के पश्चात भी जब रामचन्द्र नहीं उठा, तो वह घबरा गई। पास जाकर पुकारा- बड़कू बड़कू! लेकिन उसके कुछ उत्तर न देने पर डर गई और लड़के के नाक के पास हाथ रख दिया। साँस ठीक से चल रही थी। फिर सिर पर हाथ रख कर देखा, बुखार नहीं था। हाथ के स्पर्श से रामचन्द्र ने आँखें खोलीं। पहले उसने माँ की ओर सुस्त नजरों से देखा, फिर झट से उठ बैठा। जूते निकालने और नीचे रखे लोटे के जल से हाथ-पैर धोने के बाद वह यंत्र की तरह चौकी पर आकर बैठ गया।

सिद्धेश्वरी ने डरते-डरते पूछा, 'खाना तैयार है। यहीं लगाऊँ क्या?'

रामचन्द्र ने उठते हुए प्रश्न किया, 'बाबू जी खा चुके?' सिद्धेश्वरी ने चौके की ओर भागते हुए उत्तर दिया, 'आते ही होंगे।'

रामचन्द्र पीढ़े पर बैठ गया। उसकी उम्र लगभग इक्कीस वर्ष की थी। लंबा, दुबला-पतला, गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आँखें तथा होठों पर झुर्रियाँ।

वह एक स्थानीय दैनिक समाचार-पत्र के दफ्तर में अपनी तबीयत से

झगरूलाल का फैसला, बाबू का सपना, दो हिम्मती बच्चे।

अमरकांत अनेक संस्थाओं और राज्यों से पुरस्कृत भी हुए, जिनमें प्रमुख हैं- हिन्दी साहित्य की श्रेष्ठ उपलब्धि और सृजनात्मकता के लिए मध्यप्रदेश शासन का मैथिलीशरण गुप्त सम्मान- 1998-99, साहित्य अकादमी पुरस्कार- 2007 तथा ज्ञानपीठ- 2009। भारतीय जीवन को अभिव्यक्त करने वाले रचनाकार के लिए यह सबसे बड़ा पुरस्कार है कि उनके पाठकों की संख्या निरंतर बढ़ रही है और अनेक विश्वविद्यालयों में उनके कृतित्व पर शोध कार्य हो रहे हैं।

'दोपहर का भोजन' का प्रथम प्रकाशन कहानी 'पत्रिका' में वर्ष 1956 में हुआ तथा यह जिंदगी और जोंक कहानी संग्रह में संग्रहीत हुई। यह कहानी नायिका प्रधान है। कहानी की घटना का समय दोपहर अर्थात् मध्याह्न है। इस कहानी की प्रधान घटना भोजन है और मूल कथ्य भूख पर केन्द्रित है। इस घटना के माध्यम से निम्न मध्य वर्ग परिवार की दिनचर्या प्रदर्शित की गयी है। कहानी के अंत में ज्ञात होता है कि मुखिया की नौकरी छँटनी से चली गयी है। वे मकान किराया नियंत्रण विभाग में क्लर्क थे। किसी भी सदस्य के पास आजीविका का साधन नहीं है जिससे भोजन की आपूर्ति हो सके। परिवार में पाँच सदस्य हैं- पति-पत्नी और तीन-पुत्र। 21 वर्षीय पुत्र रामचंद्र अपनी मर्जी से प्रूफ रीडरी करता है, 18 वर्षीय मोहन नियमित के स्थान पर स्वाध्यायी परीक्षा की तैयारी कर रहा है और छह वर्षीय प्रमोद अस्वस्थ है। पाँचवें-छठें दशक के भारत के लिए कठिन समय है, जिसका संकेत ये पात्र करते हैं। कहानी का प्रारंभ सिद्धेश्वरी के खाना बनाने के बाद से होता है। खाली पेट पानी पीने से उत्पन्न विकार से वह जमीन पर लेट जाती है। बाहर धूप अत्यन्त तेज थी, उसका बेटा रामचंद्र भी आकर बेजान-सा लेट गया। फिर बारी-बारी से भोजन के दृश्य हैं। आर्थिक कठिनाई के कारण किसी के हिस्से में भरपेट रोटी नहीं है पर सभी एक दूसरे के लिए रोटी छोड़ देते हैं, कहानी के अंत का दृश्य है- ''बटलोई की दाल को कटोरे में उंडेल दिया, पर वह पूरा भरा नहीं। छिपुली में थोड़ी-सी चने की तरकारी बची थी, उसे पास खींच लिया। रोटियों की थाली को भी उसने पास खींच लिया, उसमें केवल एक रोटी बची थी। मोटी, भद्दी और जली उस रोटी को वह जूठी थाली में रखने जा रही थी कि अचानक उसका ध्यान ओसारे में सोये प्रमोद की ओर आकर्षित हो गया। उसने लड़के को कुछ देर तक एक टक देखा, फिर रोटी को दो बराबर टुकड़ों में विभाजित कर दिया। एक टुकड़े को तो अलग रख दिया और दूसरे टुकड़े को अपनी जूठी थाली

प्रकाशन संस्थान) और एक पुत्री (पटना में ब्याही गई)। जीविकोपार्जन के अनेक पत्र समूहों में कार्य किया। आर्थिक अभावों में रहे। हृदयरोग, रीढ़ रोग से पीड़ित हुए। अन्ततः उनका देहांत सोमवार, 17 फरवरी, 2014 प्रातः 4 इलाहाबाद के अशोकनगर स्थित पंचपुष्प अपार्टमेण्ट में हुआ।

पत्रिकाओं का सम्पादन करते हुए भैरव प्रसाद गुप्त जी के सहयोग 'कहानी' पत्रिका से जुड़ने के बाद वे कथा साहित्य के लेखन में अधिक सक्रि हुए। उनके साहित्यिक मित्रों में रवीन्द्र कालिया, शेखर जोशी, जयदत्त ज्ञानप्रकाश, भैरव प्रसाद गुप्त, मार्कण्डेय, राजेन्द्र यादव प्रमुख हैं। रवीन्द्र कालिया तो अमरकांत की अनेक प्रतिनिधि कहानी संग्रहों का सम्पादन किया और साक्षात्क प्रकाशित किये। छतरपुर मध्यप्रदेश में कथा कीर्ति अमरकांत का आयोजन 17- सितम्बर, 1986 को किया गया। यह मध्यप्रदेश की धरती पर उनके साहित्य और व्यक्ति का जीवित अभिनंदन था।

अमरकांत उनका साहित्यिक नाम है। वे पत्रकारिता और साहित्य लेखन साथ साथ करते रहे। वे पत्रकारिता के क्षेत्र में सैनिक (आगरा), अमृत पत्रिका, मनोरम और भारत इलाहाबाद से जुड़े रहे। संगीत, साहित्य और राजनीति उनके प्रिय विष रहे हैं। उल्लेख मिलता है कि उनके समकालीन रचनाकार साहित्यिक गोष्ठियों में उनक कहानियों के बजाय गज़ल सुनाने के लिए आमंत्रित किया करते थे। पर उन्हों ही यह मिथ तोड़ा और अपनी इंटरव्यू कहानी का पाठ किया। तब से अमरकां अपने पथ पर निरन्तर बढ़ते गए और हिन्दी संसार को अनेक श्रेष्ठ रचनाएँ दीं

अमरकांत ने साहित्यिक विधाओं में कहानी, उपन्यास, संस्मरण और बाल साहित्य लिखे।

कहानी संग्रह- जिंदगी और जोंक, देश के लोग, मौत का नगर, मित्र मिलन तथा अन्य कहानियाँ, कुहासा, तूफान, कला प्रेमी, एक धनी व्यक्ति का बयान, सुख और दुःख के साथ, जाँच और बच्चे, औरत का क्रोध, लड़का-लड़की तथा बहादुर।

उपन्यास- सूखा पत्ता, काले उजले दिन, कँटीली राह के फूल, ग्राम सेविका, पराई डाल का पंछी (सुखजीवी), बीच की दीवार, सुन्नर पाण्डे का पतोह, आकाश पक्षी, इन्हीं हथियारों से, बिदा की रात और लहरें।

संस्मरण- कुछ यादें कुछ बातें, लेखक की दोस्ती, इलाहाबाद में रेणु।

बाल साहित्य- नेडर भाई, वानर सेना, खूँटा में दाल है, एक स्त्री का सफर,

में रख लिया। तदुपरांत एक लोटा पानी लेकर खाने बैठ गई।'' एक
का यह संकेत दो बार आया है। पहले खाली पेट पानी पीती है और
रोटी के साथ। नायिका सिद्धेश्वरी के माध्यम से परिवार की पीड़ा और
बार सामने आती है पर रचनाकार सिद्धेश्वरी के परिवार बचाने की
संभाल ले जाते हैं। कहानी के पात्र गरीबी और भूख के बावजूद कहीं
आत्मीयता को टूटने नहीं देते। सिद्धेश्वरी अपने संवादों के माध्यम से
में सफल होती है। धन के अभाव में घर चलाना और परिवार के
को जोड़े रखना, सोचते-सोचते आँखों से आँसू निकल पड़ना ऐसे
कि कहानी बहुत अधिक कारुणिक हो जाती है।

अपने समग्र रूप में यह कहानी निम्न-मध्य वर्ग के भारतीय
जीवन्त दस्तावेज है जहाँ भूख रिश्ते को तोड़ते नहीं, अमानवीय नहीं
और एक भारतीय माँ ऐसा करने में सफल होती है।

दोपहर का भोजन

(कहानी)

सिद्धेश्वरी ने खाना बनाने के बाद चूल्हे को बुझा दिया और
के बीच सिर रखकर शायद पैर की उँगलियाँ या जमीन पर चलते
को देखने लगी।

अचानक उसे मालूम हुआ कि बहुत देर बाद से उसे प्यास नहीं लगी है।
की तरह उठी और गगरे से लोटा भर पानी लेकर गट-गट चढ़ा गई।
उसके कलेजे में लग गया और वह हाय राम कहकर वहीं जमीन पर

आधे घंटे तक वहीं उसी तरह पड़ी रहने के बाद उसके जी में
वह बैठ गई, आँखों को मल-मल कर इधर-उधर देखा और फिर उसकी
में अध-टूटे खटोले पर सोए अपने छह वर्षीय लड़के प्रमोद पर

लड़का नंग-धड़ंग पड़ा था। उसके गले तथा छाती की हड्डियाँ
देती थीं। उसके हाथ-पैर बासी ककड़ियों की तरह सूखे तथा बेजान
उसका पेट हंडिया की तरह फूला हुआ था।
पर अनगिनत मक्खियाँ उड़ रही थीं।

वह उठी, बच्चे के मुँह पर अपना एक फटा, गंदा ब्लाउज डाल
एक-आध मिनट सुन्न खड़ी रहने के बाद बाहर दरवाजे पर जाकर

3.
अमरकांत

परिचय

कहानी के माध्यम से जीवन के इतिवृत्त को व्यक्त करने की समृद्ध परम्परा भारतीय समाज में रही है। समय विशेष में होने वाले सामाजिक परिवर्तनों विशेषतया परिवारों के मध्य घटित होने वाली आशा-निराशा, पीड़ा, संघर्ष इत्यादि के द्वन्द्व को जिन रचनाकारों ने गहराई, विस्तार और संवेदनात्मक ढंग से चित्रित किया है उनमें श्री अमरकांत विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उनकी ख्याति वैश्विक स्तर पर यथार्थवादी लेखन में मैक्सिम गोर्की की तरह हैं। वे प्रेमचंद की परम्परा के ऐसे लेखक हैं, जहाँ देशज परम्पराएँ समय के साथ परिवर्तनों की माँग करती है और वे नये कथाशिल्प में उजागर करते हैं। उनकी कहानियाँ कथा को रेखाचित्रात्मक शैली में व्यक्त करती हैं। जिसके कारण पात्र वैयक्तिक न होकर सामाजिकता का बोध कराते हैं। अपनी समग्रता में वे सामूहिकता का परिचय देते हैं। वे नयी कहानी आन्दोलन के यशस्वी रचनाकार हैं।

श्री अमरकांत का जन्म 1 जुलाई, 1925 को भगमलपुर (नगरा) तहसील रसड़ा, जिला बलिया, उत्तरप्रदेश में हुआ था। इनका पारिवारिक नाम श्रीराम वर्मा था। पिता श्री सीताराम वर्मा और माता श्रीमती अनन्ती वर्मा की सन्तानों में वे सबसे बड़े थे। पिता मुख्तार थे और प्रायः बलिया में रहते थे। इसलिए शिक्षा का क्रम अनेक स्थानों में पूर्ण हुआ- नगरा, बलिया, गोरखपुर और इलाहाबाद। वर्ष 1942 में इलाहाबाद में पढ़ाई पूरी करते हुए स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय हुए। सन् 1942 से 1947 तक वे अनेक स्वतंत्रता सेनानियों के सम्पर्क में आये। पढ़ाई का क्रम टूटा, पुनः पढ़ाई की ओर लौटे और वर्ष 1947 में प्रयाग विश्वविद्यालय से बी.ए. किया।

वर्ष 1946 में उनका विवाह गिरिजादेवी से हुआ। आपकी तीन सन्तानें हैं अरुणकुमार वर्धन मेरठ (पत्रकार), अरविंद कुमार, इलाहाबाद (अमर कृतित्व

9. जन्म पर अपने अभिशप्त तप्त आँसू कौन बहाती है-
   (क) सिंहनी (ख) मेष माता
   (ग) गौ माता (घ) इनमें से कोई नहीं

10. निराला जी का उपन्यास है-
   (क) सुकुल की बीवी (ख) निरुपमा
   (ग) बिल्लेसुर बकरिहा (घ) चाबुक

लघु उत्तरीय प्रश्न

1 'जागो फिर एक बार' (2) कविता में गुरु गोविंद सिंह किसके प्रतीक हैं?
2. 'जागो फिर एक बार' (2) शीर्षक कविता का मुख्य संकेत क्या है?
3. कविता के अनुसार भारत का प्रधान गुण क्या है?
4. निराला मुक्त छंद के पक्षधर क्यों थे?
5. निराला को हिन्दी साहित्य के किस वाद से सम्बद्ध किया जाता है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. 'जागो फिर एक बार' (2) का सारांश लिखिए।
2. 'योग्य जन जीता है', उक्ति का पल्लवन कीजिए।
3. निराला काव्य में राष्ट्रीय चेतना पर अपने विचार लिखिए।
4. निराला को भाव 'वैविध्य का कवि' कहा जाता है, समझाइए।
5. निराला को जनता का कवि क्यों कहा जाता है?
6. निराला ओज और पौरुष के कवि हैं? पठित कविता के आधार पर समीक्षा कीजिए।

❖ ❖ ★ ❖ ❖

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. निराला को अपनी जनता का कवि किसने कहा है-
   (क) आचार्य नंददुलारे वाजपेयी (ख) आचार्य रामचंद्र शुक्ल
   (ग) आचार्य रामविलास शर्मा (घ) डॉ. नेमीचंद जैन

2. निराला काव्य का दार्शनिक आधार है-
   (क) प्रत्यभिज्ञ (ख) वेदांत
   (ग) अरविंद (घ) शैव

3. 'मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है' यह कथन किसका है-
   (क) सूर्यकांत त्रिपाठी निराला (ख) सुमित्रानंदन पंत
   (ग) जयशंकर प्रसाद (घ) महादेवी वर्मा

4. 'अनामिका' ग्रंथ है-
   (क) काव्य संकलन (ख) कहानी संकलन
   (ग) नाटक (घ) रेखाचित्र संकलन

5. 'जागो फिर एक बार' कविता किस काव्य संग्रह में संकलित है-
   (क) परिमल (ख) अणिमा
   (ग) गीतिका (घ) सांध्य काकली

6. 'जागो फिर एक बार' कविता किस पत्रिका में सबसे पहले प्रकाशित हुई थी-
   (क) सरस्वती (ख) मतवाला
   (ग) कविवचन सुधा (घ) हिन्दी प्रदीप

7. 'सवा लाख पर एक को चढ़ाऊँगा', यह कथन किसका है-
   (क) गुरु नानक (ख) गुरु तेग बहादुर
   (ग) गुरु गोविंद सिंह (घ) महाभारत के कृष्ण

8. 'योग्य-जन ही जीता है।' उक्ति है-
   (क) पुराण की (ख) गीता की
   (ग) गुरु वाणी की (घ) इनमें से कोई नहीं

पशु नहीं, वीर तुम,
समर-शूर क्रूर नहीं,
काल-चक्र में हो दबे
आज तुम राजकुँवर!-समर-सरताज!
पर, क्या है,
सब माया है-माया है,
मुक्त हो सदा ही तुम, बाधा-विहीन बन्ध छन्द ज्यों,
डूबे आनन्द में सच्चिदानन्द रूप।
महामन्त्र ऋषियों का
अणुओं-परमाणुओं में फूँका हुआ
"तुम हो महान्, तुम सदा हो महान्,
है नश्वर यह दीन भाव,
कायरता, कामपरता,
ब्रह्म हो तुम,
पर-रज-भर भी है नहीं
पूरा यह विश्व-भार-"
जागो फिर एक बार !

संदर्भ ग्रंथ

1. निराला रचनावली, भाग- 1, संपादक- नंदकिशोर नवल, राजकमल प्रकाश पेपर बैंक संस्करण, 1992
2. हिन्दी स्वच्छन्दवादी काव्य- डॉ. प्रेमशंकर, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, प्रथम संस्क 1974
3. रचना और राजनीति- प्रेमशंकर, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 1999
4. निराला और नवजागरण- डॉ. रामरतन भटनागर
5. निराला की साहित्य साधना- डॉ. रामविलास शर्मा
6. हिन्दी साहित्य बीसवीं शताब्दी- आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, लोक भा प्रकाशन, इलाहाबाद, 1977
7. ई-ज्ञानकोश इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, इकाई-
8. http://egyankosh.ac.in//handle/123456789/67414

की दृष्टि से यह धारणा पुष्ट होती है कि कवि का मन्तव्य भारतीय स्वतंत्रता
निराला ने सांस्कृतिक सूर्य के अस्त होने और गहन अंधकार छा जाने की
अनेक कविताओं में संकेत किया है। कालचक्र में दबे हुए राजकुमारों जैसी
स्पष्ट करती हैं कि कविता का सम्बन्ध नवयुवकों से है। अनेक महापुरुषों
उपनिषदों की उक्तियों का उदाहरण देते हुए भारतीयों को जगाने का प्रयास
गया है। सिंह अपनी प्रकृति के विरुद्ध सियारों से कैसे भयभीत हो सकते हैं,
से कोई उसका शावक छीनने का प्रयास कैसे कर सकता है।

कविता में भारतीय दर्शन 'अहम् ब्रह्मास्मि' की स्थापना भी की
जिसके ज्ञातभाव से प्रत्येक बाधा का समाधान होता है। कविता का मंतव्य
की बाधाएँ पैरों की धूल के बराबर भी नहीं हैं। गुरु गोविंद सिंह और
अकाल के उद्घोष से प्रारंभ हुई कविता योग की शब्दावली के माध्यम से भी
के भेदन पर बल देती है। कविता की स्थापना यही है कि संसार में यो
को ही जीवन जीने का अधिकार प्राप्त होता है। यह उक्ति भारत की ही
अन्य देश की नहीं। इसे ही बार-बार स्मरण करना है कि हम वीर हैं,
हैं, ब्रह्म हैं, इसी स्मरण से हमारा भविष्य आत्मनिर्भर हो सकेगा।

जागो फिर एक बार (दो)

(कविता)

जागो फिर एक बार!
समर में अमर कर प्राण
गान गाये महासिन्धु से सिन्धु-नद-तीरवासी!
सैन्धव तुरंगों पर
चतुरंग चमू संग:;
'सवा-सवा लाख पर
एक को चढ़ाऊँगा, गोविन्द सिंह निज
नाम जब कहाऊँगा'।
किसने सुनाया यह
वीर-जन-मोहन अति
दुर्जय संग्राम-राग,
फाग का खेला रण

राम उनके प्रिय चरित्र हैं। उनके युद्ध वर्णन को लेकर 'राम की शक्तिपूजा' लिखी। इसमें ये नवीन पुरुषोत्तम की अवधारणा पर बल देते हैं।

डॉ. रामविलास शर्मा ने उन्हें अपनी जनता का कवि कहा है क्योंकि वे तोड़ती पत्थर जैसी अनेक यथार्थवादी रचनाएँ दे सके हैं। स्वच्छदतावादी रचनाओं में सौंदर्य-चित्रण करते हए वे स्वकीया भाव को प्राथमिकता देते हैं इसलिए उन्हें आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी ने 'अस्खलित सौंदर्य का कवि' कहा है। वेदांत निराला के लिए सौंदर्य चित्रण में कवच की तरह कार्य करता है। वर्षा और बसंत उनकी प्रिय ऋतुएँ हैं और वे ऋतुओं के माध्यम से जीवन के सुख-दु:खों को अभिव्यक्त कर देते हैं, एक ही ऋतु की अनेक भावनाओं से जुड़े चित्र उनकी रचनाओं में प्राप्त होते हैं।

हिन्दी साहित्य की रचनाशीलता में निराला स्वच्छंदतावाद, नवजागरण, नववेदांत के समर्थ पोषक हैं। नयी रचनाशीलता को वे नवसंस्कार देते हैं। भाषा की दृष्टि से वे बहु स्तरीय हैं। तत्सम प्रधान शब्दावली से लेकर देशज और ग्राम की ठेठ शब्दावली के मध्य अन्य भाषाओं के शब्दों को भी अपनी शैली में प्रयोग करते हैं जो किसी एक पीढ़ी की रचनाओं में नहीं दीख पड़ती, इसलिए उन्हें पीढ़ियों का कवि भी कहा गया। अपने समय और समाज को समग्रता में प्रस्तुत करने वाले वे सबसे महत्त्वपूर्ण कवि हैं।

प्रस्तुत कविता निराला जी के प्रतिनिधि संग्रह 'परिमल' में तथा निराला रचनावली के भाग 1 में संकलित है। यह प्रथमतया 'मतवाला' (कलकत्ता, 27 मार्च, 1926) में प्रकाशित हुई थी। 'जागो फिर एक बार' शीर्षक से निराला जी ने दो कविताएँ लिखी हैं और दोनों की भावभूमियाँ भिन्न-भिन्न हैं। प्रथम कविता प्रिय को जगाने के लिए प्रिया द्वारा किया गया उपक्रम है जहाँ कवि ने अरुणोदय के माध्यम से चेतना के जागरण के नये आयाम की कल्पना की है और इसके राष्ट्रीय आशय भी स्पष्ट हैं। दूसरी कविता ओजगुण सम्पन्न है और देशप्रेम की भावनाओं को उद्धृत करती है।

'जागो फिर एक बार' शीर्षक सांकेतिक है। भारतीय इतिहास, समाज और संस्कृति के विविध पहलुओं का संकेत करती हुई यह कविता भारतीय जनता को फिर से जगाने के लिए प्रेरित करती है। तात्पर्य यह कि जाग्रत जनता को पुनर्जाग्रत होने की आवश्यकता है। यह आव्हान ऐसी जनता के प्रति है जिसकी विरासत में श्रेष्ठता है पर उसे पहचानने की शक्ति परिस्थिति जन्य नहीं रह गयी है। कविता में पराधीन भारत अथवा अँग्रेजी राज का सीधा उल्लेख नहीं है, पर रचना-काल

का इकलौता शोक गीत है जिसे एक पिता ने अपनी पुत्री के निधन पर लिखा इस गीत में निराला अपने जीवन के सूत्र देते हैं और सामाजिक कटुता का यथा चित्रण भी करते हैं। कविता की महत्त्वपूर्ण पंक्ति है- 'दुःख ही जीवन की कथ रही, क्या कहूँ आज जो नहीं कही।' उनकी अवसान तिथि अक्टूबर 1961 है सन् 1916 से 1961 तक की लम्बी रचना यात्रा में ऐसे अनेक दृश्य हैं जो शिल्प और कथा की दृष्टि से निराला को विशिष्ट बनाते हैं।

उनके साहित्यिक मित्रों में प्रमुख हैं- सेठ महादेव (जिनके साथ 'मतवाल का प्रकाशन हुआ और यहीं से निराला शब्द भी सामने आया), शिवपूजन सहा दुलारेलाल भार्गव, कृष्णमोहन वाजपेयी, नंददुलारे वाजपेयी, रामविलास शर्मा, जानक वल्लभ शास्त्री, महादेवी वर्मा और अनेक रचनाकार मित्र जिनके साथ निराला स्व को रचते रहे।

उन्हें स्वयं को गद्य-पद्य के 'समाभ्यस्त' कहा है। वे अनेक विधाओं में लिख रहे हैं- उनकी रचनाओं में प्रमुख हैं-

काव्य- प्रथम अनामिका (1922), परिमल (1929), गीतिका, तुलसीदा (1938), अणिमा (1943), बेला (1943), कुकुरमुत्ता (1942) (1948), न पत्ते (1946), अर्चना (1950), आराधना (1953), गीतगुंज (1964) और सांध्य काकली (1969)।

उपन्यास- निरूपमा, चोटी की पकड़, प्रभावती, काले कारनामे, अप्सरा

कहानी संग्रह- सुकुल की बीवी, चतुरी चमार, लिली, सखी।

रेखाचित्र- कुल्लीभाट, बिल्लेसुर बकरिहा।

निबंध- प्रबन्ध प्रतिमा, चयन, चाबुक।

व्यावहारिक समीक्षा- रवीन्द्र कविता कानन।

अनुवाद- रामकृष्ण कथामृत तथा रामचरित मानस का खड़ी बोली में

काव्य दृष्टि

निराला का समय भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के संघर्ष, प्रथम और द्वितीय वि युद्ध के मध्य से लेकर स्वतंत्र भारत तक है और इसके मध्य वे भारतीय मू को पुनर्स्थापित करने पर बल देते हैं। वे प्रिय स्वतंत्र रव अमृत मंत्र नव की प्रा करते हैं, जिससे सम्पूर्ण संसार जगमग हो जाये। भारतीय संस्कृति के उन्नायकों

2.
सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

परिचय

पं. श्री सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की रचनाओं में हिन्दी-पाठक प्रारंभ से ही अनेक संभावनाओं की खोज करता रहा है। व्यक्ति के स्तर पर महाप्राण स्वीकृत नाम है। रचना के स्तर पर वे साहित्य के विभिन्न चरणों का प्रतिनिधित्व करते हैं- छायावाद, प्रगतिवाद प्रयोगवाद और नयी कविता तक। पर मूल में उनका स्वच्छन्दतावादी व्यक्तित्व है जिसके प्रकाशन और अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने मुक्त छंद को अपनाया, लगभग वैदिक मंत्रों की तरह। उनकी स्पष्ट घोषणा है, 'मनुष्यों की मुक्ति की तरह ही कविता की भी मुक्ति होती है।' उनके व्यक्तित्व निर्माण में महिषादल (बंगभूमि) और बैसवाड़ा उत्तरप्रदेश की महत्त्वपूर्ण भूमिका है जहाँ उन्होंने अपने जीवन-संघर्ष के साथ-साथ प्रकृति और जीवन के सौंदर्य से संस्कार प्राप्त किये।

आपका जन्म फरवरी, 1899 में हुआ था और इसे आपने अपने प्रिय ऋतु बसंत की पंचमी से जोड़ लिया। अद्यतन हिन्दी संसार इसी परम्परा का निर्वहन करता आ रहा है। पिता राम सहाय बंगाल पुलिस में थे, महिषादल में उनके साथ रहते हुए निराला जी भारतीय नव जागरण के सर्वोत्तम सें परिचित होते हैं और रामकृष्ण विवेकानंद के अद्वैत दर्शन (वेदांत) को अपनाते हैं, इसलिए उन्हें हिन्दी के लिए बंगाला रेनेशां की देन कहा गया। बंगाल के बाद वे बैसवाड़ा आते हैं। वे अपने पैतृकग्राम गढ़ाकोला में भी रहे। इसके बाद कानपुर, लखनऊ, उन्नाव, काशी और प्रयाग उनकी कर्मभूमि रही है। उनका पारिवारिक जीवन लगभग दुःखांत नाटक की तरह अस्त-व्यस्त रहा है। बचपन में ही माँ को खोया, युवावस्था में ही परिवार के अनेक सदस्य काल-कवलित हुए। वर्ष 1918 की महामारी में कविप्रिया 'मनोहरा' नहीं रहीं। उनकी दो संताने हैं बेटी सरोज और बेटा रामकृष्ण। बेटी सरोज चिकित्सा के अभाव में अठारह वर्ष पूर्ण करते ही चली गई। जिसे कवि ने तरुण जनक से जन्म की बिदा अरुण कहा है। बेटी के निधन पर रचित सरोज स्मृति हिन्दी साहित्य

तामसी ये विशेषण पूर्व कर्मों की प्रकृति के अनुरूप ही हैं। कर्मों के विवेचन
संचित प्रारब्ध और क्रियमान कर्मों का भी उल्लेख किया जाता है। गीता में
सीधे कर्म को निष्काम कर्म से ही जोड़ा गया है। कामना रहित होकर किये
वाले कर्म को ही कर्म योग कहा गया है। कामना रहित का तात्पर्य जीवन
के संरक्षण से है और जीवन मूल्यों का संरक्षण ही श्रेष्ठ कर्त्तव्य है और यही
गीता की दृष्टि से कर्म योग है। गीता में प्रारंभ में ही संकेत मिलते हैं कि
के प्रति हमारी निष्ठाएँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं- ज्ञान एवं कर्म के प्रति निष्ठा। ''ज्ञानयो
सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम्।'' (3/3) जो निष्ठावान व्यक्ति अपने मन के द्वारा
इन्द्रियों को वश में करने का प्रयत्न करता है और बिना किसी आसक्ति के कर्मेन्द्रि
प्रारंभ करता है वह उत्कृष्ट है।

गीता में कर्म और ज्ञान की मिली-जुली स्थिति भी देखी जाती है।
के माध्यम से प्रश्न उपस्थित किया गया है कि कर्म की अपेक्षा ज्ञान श्रेष्ठ
है तो कर्म में उसे क्यों नियोजित किया जा रहा है। जैसा कि स्पष्ट है गीता
कर्म संदेश कर्म के उदात्त पक्ष को प्रतिष्ठित करता है, इसलिए कर्म के प्रति उत्प्रे
होने के लिए अर्जुन का प्रबोधन होता है। गीता के अध्याय तीन में कर्म के
दिये गये महत्त्वपूर्ण उद्देश्य निम्नानुसार हैं-

1. कर्म से विमुख होकर किसी प्रकार की सिद्धि प्राप्त नहीं की जा सक
2. प्रत्येक को प्रकृति से अर्जित गुणों के आधार पर ही कर्म करना प
है।
3. अपना नियत कर्म करो क्योंकि कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना ही
है। फलतः अपनी प्रसन्नता के लिए अपने नियत कर्म करना चाहिए।
4. सामान्यजनों को शिक्षित करने की दृष्टि से भी कर्म करना आवश्
है क्योंकि यही कर्म अनुकरणीय होगा, जिसका विश्व अनुसरण
सकेगा
5. किसी वस्तु का अभाव व आवश्यकता न रहने पर भी नियत कर्म क
चाहिए।
6. विद्वान व्यक्ति को चाहिए कि आसक्त अज्ञानी व्यक्ति को कर्म क
से रोके।

इस प्रकार गीता कर्म योग के माध्यम से निष्काम कर्म का संदेश देती

कार्यों में कुशलता की अपेक्षा करती है। कर्म की बहुविध व्याख्या यह प्रमाणित करती है कि गीताकार ने अपने व्यावहारिक दर्शन को प्रतिपादित किया है। ज्ञान, कर्म और भक्ति योग की प्रतिष्ठा का अभिप्राय है- इन तीनों का समीकरण और प्रत्येक के लिए जरूरी है- निष्काम प्रयोजन। कामना रहित उद्देश्य होने पर ही व्यक्ति प्रकारान्तर से आत्मसाक्षात्कार कर सकता है। निष्काम कर्म के पूर्ण आग्रह का अभिप्राय है- कृष्णार्पित कर्म। कृष्ण अर्जुन को युद्ध के लिए प्रेरित करते हैं तो इसका आशय यह नहीं है कि गीता युद्ध का समर्थन करती है। विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि युद्ध एक प्रतीक है। युद्ध कर्त्तव्य बुद्धि का प्रतीक है। समाज के लिए जो अच्छा है, के लिए संघर्ष करना ही कर्म है। कर्म से पलायन संभव नहीं। गीता कर्मयोग के स्वरूप का निर्धारण करते हुए कर्म की शिक्षा देती है और वह है- ज्ञान समन्वित ईश्वरोन्मुख कर्म। कृष्ण बार-बार अर्जुन से कहते हैं- अकर्म से कर्म निश्चित श्रेष्ठ है। (कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते 3/7) जो पुरुष मन से इन्द्रियों को वश में करके अनासक्त भाव से युक्त होकर कर्मेन्द्रियों से कर्म करता है वह श्रेष्ठ है। अठारहवें अध्याय के अंत में यह स्पष्ट होता है कि अज्ञान जनित मोह को नष्ट करना ही जीवन का उद्देश्य होना चाहिए- जैसा अर्जुन का हुआ। (स्थितोऽस्मि गतसंदेहः करिष्ये वचनं तव। 18/73)

कर्म के भेद

गीता में कर्म के तीन भेदों की चर्चा की गई है। ये भेद गुणों पर आधारित हैं अर्थात् सत्, रज, तम के अनुसार इन्हें बाँटा गया है। अठारहवें अध्याय के 23, 24, 25वें श्लोकों में यह स्पष्ट है। सात्विक कर्मों को परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया गया है कि जो कर्म नियमित है और जो आसक्ति राग या द्वेष से रहित होकर कर्मफल की चाह के बिना किया जाता है, वह सात्विक कर्म है। अर्थात् विभिन्न आश्रमों और समाज के वर्णों के आधार पर जो कर्म निर्देशित किये गये हैं उसे अनासक्त भाव से करना सात्विक कर्म होगा। इसके पश्चात जो कार्य अपनी इच्छा पूर्ति के नियमित प्रयासपूर्वक एवं मिथ्या अहंकार भाव से किया जाये वह राजसिक कर्म की परिधि में आयेगा। इन दोनों के विपरीत जो कर्ता, कर्म एवं कर्मफल के प्रति आसक्त होकर फलों का भोग करना चाहता है। जो अपनी वैयक्तिक सीमा के अंदर अपने आसपास के प्रति अनुरक्त रहता है। बाहर से अनासक्त होता है और स्वयं के लिए कार्य करता रहता है वह तामसिक कर्म की श्रेणी में आता है। इन कर्मों को कर्ता के आधार पर भी जोड़कर देखा गया है। सात्विकी, राजसी और

गया है क्योंकि गीता का विश्वास है कर्म और निरन्तर कर्म ही जीवन का ध्येय है-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन्।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि।। 2/47

योगस्थः कुरु कर्माणि संग त्यक्त्वा धनंजय।
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।। 2/48

दूरेण ह्यवरम कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः।। 2/49

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुश्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्।। 2/50

उपर्युक्त श्लोकों में कर्ता और कर्म के संबंधों की ओर संकेत किया गया है।

प्रत्येक का अधिकार कर्म पर है, फल पर नहीं। प्रत्येक को जय-पराजय की समस्त आसक्ति त्याग कर समभाव से कर्म करना चाहिए। यह समभाव ही योग है। जीवन में गर्हित कर्म के लिए कोई स्थान नहीं। योग के लिए निरन्तरता चाहिए। सारा कार्य कौशल ही योग है। यह प्रक्रिया स्थितप्रज्ञ की होती है और स्थितप्रज्ञ होने का तात्पर्य है विशुद्ध दिव्य चेतना को प्राप्त कर लेना। युद्ध की पृष्ठभूमि में जय-पराजय की समस्त आसक्ति त्यागकर यदि कर्म किया जाये तो यह संगति ही योग है।

कर्म की दिशाएँ

गीता में कर्म की स्थिति को अनेक विधियों से विश्लेषित किया गया है अर्थात् कर्म परिभाषित है और उसके अर्थ स्पष्ट हैं। कर्म की तीन दिशाएँ हैं-

1. कर्म (स्वधर्म)
2. विकर्म तथा
3. अकर्म

कर्म के अन्तर्गत वे कार्य हैं जिनका आदेश प्रकृति के गुणों के रूप में प्राप्त किया जाता है। विकर्म में सम्मति नहीं होती और अकर्म का अर्थ है- अपने कर्म को न करना जो आदेश प्रकृति से प्राप्त हुआ है, जिसे किया जाना आवश्यक है उन्हें न करना अकर्म है इसे पापमय माना गया है। गीता कर्मसु कौशलम् अर्थात्

समाज को प्राप्त होता रहा है। इस ग्रंथ पर सबसे पहले आदि शंकराचार्य ने भाष्य लिखा और इस महान ग्रंथ को अपने प्रस्थानत्रयी (वेदान्त सूत्र, उपनिषद और गीता) में स्थान दिया। माना जाता है कि शंकराचार्य जी की तर्कशैली और प्रतिपादन पद्धति में गीता का बहुत योगदान था। भक्ति आन्दोलन से जुड़े आचार्यों जिनमें प्रमुख हैं रामानुज, मध्व, निम्बार्क, भास्कर, वल्लभ आदि के द्वारा गीता पर भाष्य लिखे गए और भक्ति आंदोलन के अंतर्गत अद्वैत, द्वैत, शुद्धाद्वैत, विशिष्टाद्वैत जैसे सिद्धांतों का प्रतिपादन हुआ। ये भाष्य अपने मत के समर्थन में सार्थक पुष्टि के रूप में रचे गए, जहाँ जीव और ब्रह्म के सम्बन्धों पर विस्तार से चर्चा की गयी। अन्य महत्त्वपूर्ण नामों में स्वामी विवेकानंद, बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गाँधी, ओशो रजनीश इत्यादि भी हैं, जिन्होंने अपने सिद्धांतों के पालन तथा अपने विचारों के समर्थन के लिए गीता की व्याख्या अपने-अपने ढंग से की।

गीता में वर्णित योग और कर्मयोग

गीता में अठारह योगों की चर्चा की गयी है। जिनमें क्रमशः —

1. अर्जुन विषाद योग
2. सांख्य योग
3. कर्म योग
4. ज्ञान योग
5. कर्म संन्यास योग
6. आत्म संयम योग/ ध्यान योग
7. ज्ञान-विज्ञान योग
8. अक्षर ब्रह्म योग
9. राजगुह्य योग
10. विभूति योग
11. विश्वरूप दर्शन योग
12. भक्ति योग
13. क्षेत्र क्षेत्रज्ञ योग (प्रकृति पुरुष विभाग योग)
14. गुणत्रय विभाग योग
15. पुरुषोत्तम योग
16. देवासुर सम्पद विभाग योग
17. श्रद्धात्रय विभाग योग
18. मोक्ष संन्यास योग

इनमें से प्रत्येक के लिए अध्याय नियत है, परन्तु कर्मयोग का प्रत्येक योग अथवा प्रत्येक अध्याय में प्रवेश है। कर्म की प्रत्येक योग विशेष में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। किसी भी विशेष योग को बड़ा या छोटा नहीं कहा जा सकता। स्वामी विवेकानंद जी ने भी संकेत किया है कि अपने-अपने कार्य क्षेत्र में सब बड़े हैं। गीता के दूसरे अध्याय के श्लोक 47 से 50 तक में कर्म की प्रकृति को विश्लेषित किया

भगवत गीता का परिचय

भगवत गीता का परिचय महाभारत के सारतत्व के रूप में भी किया जाता है। यह ग्रंथकार का विशिष्ट चिंतन है, लगभग एकान्तिक धर्म की तरह दिया गया उपदेश, जो महाभारत युद्ध के पूर्व श्रीकृष्ण के द्वारा अर्जुन को दिया गया। महाभारत के शांतिपर्व 348/8 में संकेत मिलता है कि कौरव-पाण्डवों की सेना युद्ध के लिए आमने-सामने उपस्थित थी और अर्जुन युद्ध से अन्यमनस्क थे, तब यह उपदेश सामने आया। कृष्ण अर्जुन के सारथी हैं, युद्ध भूमि में भी और अन्तर्मन के लिए भी। गीता का आरंभ ही ऐसे वाक्य से होता है-

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः।
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय।

अर्थात् युद्ध करने की इच्छा से एकत्र हुए मेरे और पाण्डु के पुत्रों ने क्या किया। 'क्या किया' यह ध्येय वाक्य है। धर्म क्षेत्र किस तरह से कर्मक्षेत्र में रूपान्तरित होता है। इसे ही समझने की आवश्यकता है। प्रथम श्लोक में ही कर्म का संकेत प्राप्त होता है कि गीता कर्म पर केन्द्रित महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। कर्म योग के माध्यम से ही अर्जुन का रूपान्तरण होता है।

गीता में अठारह अध्याय हैं। 700 श्लोक हैं। यह संस्कृत भाषा में लिखा गया है। खिन्नमना अर्जुन के अन्तःसंघर्ष को प्रस्तुत करते हुए गीताकार ने श्रीकृष्ण के माध्यम से जो प्रस्तुत किया है, उसका सम्बन्ध मानव मूल्यों में चयन एवं स्वीकार से है। अर्जुन अवसाद भरे क्षणों में कृष्ण से पथ प्रदर्शन चाहता है-पूर्व आस्था भाव से, पूर्ण श्रद्धा भाव से। यह आस्था आगे चलकर गीता में भक्ति के रूप में प्रतिपादित होती है। परम्परा विश्लेशण से ज्ञात होता है कि मोक्षदा एकादशी को अर्थात् मार्गशीर्ष मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को 'गीता जयन्ती' मनायी जाती है और इसका पारायण भी होता है।

गीता और भाष्य परम्परा

गीता भारतीय धर्म और संस्कृति में सबसे जीवन्त स्वर है और प्रत्येक समय में सार्थक मानस इसमें अपना समाधान ढूँढ़ता आया है। एक सार्थक रचना ही नहीं बल्कि किसी जीवन्त व्यक्ति की तरह प्रत्येक पीढ़ी को गीता अपनी ओर आमंत्रित करती है, नये संदर्भों के लिए प्रेरित करती है ताकि समय और समाज में नयी दीप्ति प्रकाशित हो। इस प्रकार चिन्तकों के माध्यम से भी गीता का नवीन संदेश

इकाई- 1

1.
समसामयिक
संदर्भ- श्रीमद्भगवद्गीता-कर्मयोग

प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान परम्परा में गीता को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। समय के दबावों में रचना के इतिहास के रूपान्तरण में किसी ग्रंथ विशेष की भूमिका पर भारतीय चिन्तन परम्परा में पर्याप्त विचार किया गया है। इसमें वैश्विक स्तर पर सर्वाधिक विचार गीता पर हुआ है इसलिए भारतीय संस्कृति में आरंभ से ही जिन मानवीय अथवा सामाजिक मूल्यों पर बल दिया गया, वे मूल्य किसी ग्रंथ विशेष में विश्लेषित हो, ऐसा विशेष ग्रंथ गीता ही है। ऐसा विचारक मानते हैं कि इस ग्रंथ के माध्यम से जीवन के लक्ष्य को ठीक से जानने-समझने में सहायता मिलती है। आज भी भारतीय चिंतन परम्परा को जानने-समझने के लिए गीता महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। गीता की व्याख्या लम्बे समय तक एक भक्ति ग्रंथ के रूप में ही की गयी और आत्मा-परमात्मा के सम्बन्धों पर ही व्याख्या केन्द्रित हुई। आत्मा की नश्वरता अमरता पर केन्द्रित विचारों का परिणाम यह हुआ कि गीता का मुख्य उद्देश्य ज़िस सामाजिक हितों को लेकर सामने आया था वह नेपथ्य में चला गया। महाभारत की पृष्ठभूमि के कारण गीता इतिहास के निर्णायक अथवा महत्वपूर्ण क्षण पर आधारित ग्रंथ है। नाटक की शब्दावली 'संकलन त्रय' का उपयोग करते हुए कहा जाये तो यह ग्रंथ युद्ध की घटना, युद्ध की तिथि विशेष और ऐसे युद्धार्थियों के बीच उपस्थित होकर कही गयी है, जहाँ युद्ध अपरिहार्य है अर्थात् इतिहास, समाज और संस्कृति सभी का विवेचन इस ग्रंथ में स्पष्ट होता चलता है। इतिहास चक्र में एक विशेष भूमि पर खड़े होकर स्वयं को जानने और साधने की पहल गीता ग्रंथ में है। यह प्रक्रिया कर्म के माध्यम से ही व्यक्त की गयी है।

(ख) अज्ञान जनित मोह को नष्ट करना

(ग) भक्त और भगवान के सम्बन्धों को स्पष्ट करना

(घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. श्रीमद्भागवत गीता का सामान्य परिचय दीजिए।
2. गीता उपदेश का प्रयोजन क्या है?
3. गीता भाष्य लिखने वाले किन्हीं दो आचार्यों के नाम लिखिए।
4. योग शब्द का क्या अभिप्राय है?
5. कर्मयोग क्या है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. 'कर्म पर हमारा अधिकार है, फल पर नहीं'। इस कथन की व्
   कीजिए।
2. कर्मयोग का फल क्या है? समझाइए।
3. गीता में कितने प्रकार के कर्म वर्णित हैं? प्रत्येक को समझाइए।
4. कर्म में कुशलता ही योग है। इस कथन को समझाइए।
5. गीता में कर्म के लिए किये गए महत्त्वपूर्ण उद्देश्यों को लिखिए।

❖ ❖ ★ ❖ ❖

संदर्भ ग्रंथ

1. श्रीमद् गीता तत्व विवेचनी हिन्दी टीका, जयदयाल गोयन्दका, गीता प्रेस गोरखपुर
2. श्रीमद् भागवद्गीता यथारूप, कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद,भक्ति वेदांत बुक ट्रस्ट, मुंबई
3. शांकर भाष्यः श्रीमद् भागवत गीता, गीता प्रेस गोरखपुर

महत्त्वपूर्ण प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. गीता के आरंभिक श्लोक के शब्द हैं-
   (क) धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे (ख) यत्र योगेश्वरः कृष्णो
   (ग) कर्मण्येवाधिकारस्ते (घ) श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं
2. गीता संवाद ग्रंथ है-
   (क) कृष्ण और अर्जुन संवाद (ख) संजय और धृतराष्ट्र संवाद
   (ग) जीव और ब्रह्म का संवाद (घ) उपर्युक्त सभी
3. गीता में अध्यायों की संख्या है-
   (क) 18 (ख) 17
   (ग) 20 (घ) 21
4. गीता में सर्वमान्य श्लोकों की संख्या है-
   (क) 700 (ख) 710
   (ग) 800 (घ) 810
5. गीता का प्रथम भाष्य किसने लिखा-
   (क) रामानुजाचार्य (ख) शंकराचार्य
   (ग) मध्वाचार्य (घ) स्वामी विवेकानंद
6. गीता में कितने प्रकार के योगों की चर्चा है-
   (क) 18 (ख) 21
   (ग) 22 (घ) 101
7. गीता का लक्ष्य है-